



# आधुनिक राजस्थानी साहित्य

— एक शताब्दी —

सूचिका

प्राचार्य मरोत्तमदास स्वामि

लेखक

शांतिलाल भारद्वाज 'राकेश'

प्रकाशक

चित्रगुप्त प्रकाशन, अजमेर

प्रकाशक—श्री० पी० मापुर  
विश्वमुक्त प्रकाशक, पुरानी मण्डी, भजमेर

मूल्य—पाँच रुपये

मुद्रक—बसन्तोत्तम घोषा,  
रमा प्रिंटिंग प्रेस भजमेर

## प्राक्कथन

राजस्थानी भाषा का साहित्य अनेक दृष्टियां से महत्त्वपूर्ण है। यह प्राचीन है, विस्तार है, विषय-वैविध्य से परिपूर्ण है और जीवनोपयोगी है। उसकी इस अन्तिम विस्तृता में कविकुसुमगुप्त रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महामया प० महलमाहल भारतीय जैसे महापुरुषों का ध्यान भी आकर्षित किया था।

इस महान् राजस्थानी साहित्य का परिचय कराने का कोई उस्मानीय प्रयत्न अभी तक नहीं हुआ। उसके विचारों का कोई इतिहास अभी तक नहीं लिखा गया।

धी धान्तिमान भाखाज ने अपनी इस कृति में राजस्थानी साहित्य के प्रागुनिक काल का एक उत्तरा परिचय देने का प्रयास किया है का एक प्रकार से अमिन्वसीय है।

राजस्थानी भाषा का प्राचीन और मध्यकामीन साहित्य बहुत विस्तार और विस्तृत है। उसकी तुलना में उसका प्रागुनिक साहित्य परिमाण में बहुत घट्ट है। प्रागुनिक काल में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ-साथ बाहरी राजकर्मचारियों का पदार्पण राजस्थान में हुआ जिसके फलस्वरूप राजस्थानी को राज भाषा के पद से हटना पड़ा और उसका स्थान पहले अंग्रेजी और उर्दू ने और अनेक अक्षरक किसी अंग में हिन्दी ने लिया। सिला-उस्माओं में अंग्रेजी और हिन्दी को स्थान मिला। राजस्थानी में तो राजभाषा रही और न सिला ही भाषा! न-सिलित सोम धीरे-धीरे राजस्थानी से परास्मृत होठ मये। उसकी पारणा में राजस्थानी अक्षरों-बाजी भाषा रह गयी। फलतः राजस्थानी में नवीन साहित्य की रचना केवल प्राचीन ढंगी के कवियों मात्र-कविया तथा कतिपय मातृ-भाषा के अमी उरसाही साहित्यकारों तक ही सीमित रह गयी।

इस प्रकार यद्यपि राजस्थानी में साहित्य रचना का प्रवाह अरुद पड़ गया पर वह विस्तृत अरुद कमी नहीं हुआ। प्रागुनिक काल में भी राजस्थानी भाषा में ऐसा महत्त्वपूर्ण साहित्य लिखा गया जो राजस्थान की तथा राजस्थान के बाहर की जनता को भी, प्रभावित करने में समर्थ रहा है।

प्रागुनिक काल से पद्य-साहित्य की प्रधानता रही पर यद्य-साहित्य भी अल्पी मात्रा में लिखा गया। नाटक कहानी एषाकी मद्य-काव्य रणा विना, मंस्मरल, प्रादि गद्य के विविध अंगों का विकास हुआ। उपन्यास जीवनी

घोर निबन्ध की प्रगति प्रबन्ध ही मन्द रही। वैज्ञानिक घोर व्यावसायिक साहित्य का ता हिन्दी जैसी सपन्न मापाधों में भी प्रभाव-ना है फिर राजस्थानी में ता उसकी छाया ही कैसे की जाय ?

श्री भाखाज को राजस्थानी के साहित्य-कामीन साहित्य का बहु परिचय प्रस्तुत करने में पर्याप्त कठिनाता का सामना करना पड़ा है। तभी राजस्थानी साहित्य का निर्माण ता निरन्तर होता रहा है पर उसका प्रचार बीसा नहीं हो पाया। यह बात नहीं कि उसकी मँग नहीं पर राजस्थान में प्रच्छेदी प्रकाशन संस्थाओं के प्रभाव में उसका प्रवेष्ट विज्ञापन नहीं हो पाता और जिन्हें जगकी चाह है उनक पास बहु नहीं पहुँच पाता। उसका बहुत-सा भाग एक बार प्रकाशित होकर दुबारा प्रकाशित नहीं हुआ। यह मात्र *Out of print* और अत धमन्व हो चुका है।

प्रकाशित साहित्य को मात्र एक स्थान पर प्राप्त कर छपना भी सम्भव नहीं। कोई ऐसा पुस्तकालय नहीं जहाँ मात्र बहु साहित्य एकत्र देखने का मित तक कोई ऐसा पुस्तक-विच्छेता नहीं जिसको यहाँ मुख्य लेकर भी उसे एक साथ प्राप्त किया जा सके। इस समस्त साहित्य का संग्रह करके उसका धम्मयन करना और उसका परिचय सिखना महब-नाध्य काय नहीं। श्री भाखाज ने अपने धम्मयसाय में इस दुस्साध्य कार्य को मित करने का प्रयास किया है।

यह परिचय एम्० ए० परीक्षा के प्रबन्ध क रूप में मित गया था। गीमता क कारण मेलक प्राप्त सामग्री की भी विस्तृत ध्यान-बीन नहीं कर पाया। इस दृष्टि से यह परिचय जितनी धरा में प्रभुरा भी कहा जा सकता है।

पुस्तक के मुद्रण में कई भूल हा गयी है। घाघा है दुगर मस्करण क ममय परिचय अधिक पूर्ण किया जा सकता और मुद्रण सम्बन्धी भ्रता को भी ठीक किया जा सकता।

उपासना-भवन

उदयपुर

विजयवायमी स २०१६

नरोत्तमदास स्वामी

मात्ररस्य-भारा में परिवर्तन क किसी भी ऋण को पकड़ पाना सासान नहीं है। फिर भी मान्यताओं के निर्धारण में हमारे पूर्वाग्रहों का भी कम योगदान नहीं रहता। हम निष्कर्ष के प्रति खड़े पुरा उत्तरदायित्व नहीं निभा पाते और यही किसमन साहित्य को कई बार कुछ ठसग परिभाषाओं में भी बाँध देती है।

राजस्थान अपनी सृष्टि और व्यवस्था में सदा स कई विचित्रताओं को संकर बना है। राजस्थानी-साहित्य के प्रसंगक और निन्दक—दोना चान्द्रिया पर है। प्रसंगक उसकी किसी भी दुर्बलता को स्वीकार नहीं करना चाहता और निन्दक को सिधाय दुर्बलताओं के और कुछ भी मजूर नहीं पाता।

बस्तुत यह हमारे आत्मासोचन का भद्रास है। साहित्य को द्शीलित यमासाचक के हाथों प्रतिष्ठा प्रदित करनी होती है।

राजस्थानी साहित्य की जड़ें पहरि ह। हिन्दी क बीर-भाषा काल का उदय कर्कना के ही आधार पर टिकना पड़ा है। आश्चर्य है कि मध्य-काल में गिनक-काम्य हिन्दी की कोसियों की पपायठ में नहीं बठ पाया। तब बह मोक-काम्य के रूप में बीबित रहा।

प्राथीन और मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य पर पर्वीत न हाठ गुण भी काफी मिला गया है। मात्र भी मिला जा रहा है। मकिन प्राधुनिक काम की प्रवृत्तिया पर पुटकर मला क घतिरिक्त और कुछ काम नहीं हा पाया। कुछ हुआ भी हा तो मत्रक इस मजान का घपना घपराय ही मानया।

घत यह आश्चर्यक समझ गया नि प्राधुनिक काम की राजस्थानी साहित्य की विविध प्रवृत्तियों की एक इतिवृत्तात्मक जानकारी प्रस्तुत का पाय।

प्रस्तुत पुस्तक में प्राधुनिक काल के अग्रवाता महाकवि सूर्यमल्ल को माना गया है। इसस पूर भी कबिराज बीकौरास की उपाधा नहीं की जा मकनी मकिन सन् '१७ की अन्ति जातीय-उत्थान का एक स्वलिम पृष्ठ है जहाँ स्वाधिकार का उद्घाव अविक्त प्राणुवान मुनाई रता है और राजस्थानी साहित्यकाठ में महाकवि सूर्यमल्ल सवधिक प्रग्वसित है।

पुस्तक के लिए जितनी सामग्री जुटाई गई—उतना मिला नहीं जा सका।  
 जिन परिस्थितियों में लिखा गया उसमें मात्र यही हो सकता था। संकल्प  
 है कि अब इन विषयों में कुछ करूँ।

भड़के भाषाय नरोत्तमदास स्वामी का जिन सभ्यों में आभार मानूँ /  
 इस काम में वे पूरे निर्रहस्य रहे। उनका स्नेह मरी प्रेरणा बना। उनका  
 धार्मिक प्रतिपत्ति प्राप्त किये जिनका ध्यान मुझे कुछ भी करने का ग्राह्य नहीं होता।

राजस्वामी के उपासक श्रीर सचक की सीमाप्यगिह सेनाबत ने मुझे कई  
 उपसामर्थ्या स परिचित किया।

राजस्वामि साहित्य अकादमी के सचिव पद पर कार्य करत हुए अकादमी  
 कार्यालय स भी मुझे अत्यधिक मदद मिली। ऐसी मदद आ मात्र अकादमी स  
 ही मिल सकती थी। और सब से अन्तिम आभार पत्नी का—जिसने पुस्तक के  
 बिपरे हुए पत्रा का कनी री के काबजा में मही मिलने दिया।

दीर्घमासिका }  
 १९९१ }

शान्तिलाल भारद्वाज 'राकत'

मरु-सरस्वती के पुजारियों को

समर्पित

‘राफेरा’



आधुनिक राजस्थानी साहित्य

—राजस्थानी भाषा

राजस्थानी भारत-यूरोपीय भाषा-परिवार की भाषा और राजस्थान तथा मासवा की मातृ-भाषा है।

ई० स० १९३१ की जन-गणना के अनुसार, करीब १ करोड़ ४० लाख मनुष्यों की बोलियाँ 'राजस्थानी' में गिनी जाती हैं। प्रियर्सन ने राजस्थानी बोलियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है—

- १ पश्चिमी राजस्थानी — जोधपुर की बड़ी राजस्थानी प्रपत्ति घुड पश्चिमी मारवाड़ी बटकी वसी, बीकानेरी बागड़ी शेखावाटी मेवाड़ी, खैराड़ी सिरोही की बोलियाँ गोडवाड़ी और देवडावाटी।
- २ उत्तर-पूर्वी राजस्थानी — प्रहरीवाटी और मेवाती।
- ३ मध्य-पूर्व राजस्थानी (डडाड़ी) — तोरावाटी बड़ी जयपुरी काठेवा रावा वाटी, धजमेरी किशनगढ़ी और सी नागरवाल हाड़ीती।
- ४ दक्षिण-पूर्वी राजस्थानी या मासवी — इसके कई रूपमेव हैं जिनमें रांमड़ी और सोडवाड़ी प्रमुख हैं।
- ५ दक्षिण राजस्थानी — निमाड़ी।

'भीली' को प्रियर्सन ने 'राजस्थानी' से पृथक् माना है लेकिन डा० सुनील-कुमार चाटुर्ज्या व्याकरण की दृष्टि से 'भीली' को 'राजस्थानी' के अत्यधिक समीप मानते हैं। राजस्थानी भाषा ने दक्षिण में काकणी भाषा तक को प्रभावित किया है। इसके अलावा पंजाब उत्तर-पश्चिम सीमागत प्रदेश कश्मीर की पूर्वरी बोली और तमिलनाड की तौराड्री बोली भी राजस्थानी के अन्तर्गत हैं।

प्रो० मरोत्तमदास स्वामी ने निम्न चार बोलियों को ही मुख्य माना है—

- १ पश्चिमी राजस्थानी या मारवाड़ी—उदयपुर, जोधपुर, बीसलमेर, बीकानेर, और शेखावाटी के क्षेत्र।

- २ पूर्वी राजस्थानी या ठूडाड़ी —जयपुर और हाड़ीली क्षेत्र ।  
 ३ उत्तरी राजस्थानी —जसवर प्रदेश की मेवाती और घड़ीरी बोलियाँ ।  
 ४ बसिणी राजस्थानी या भातकी—जासवा और नीमाड़ की बोलियाँ ।

राजस्थानी का प्राचीन नाम मर-भाया था । प्राचीन कालों के 'कुसुममासा' नामक ग्रन्थ में भारत की १० देव-भाषाओं में मरुदेश की भाषा का भी उल्लेख किया गया है । बबुसफ़जल ने 'आदि बरकरी' में भारत की प्रमुख भाषाओं में मारवाड़ी को भी गिनाया है । राजस्थानी का चार्ल्स द्वारा प्रयुक्त रूप 'डिमर' नाम से प्रसिद्ध रहा है ।

विस्तार और साहित्य दोनों की दृष्टि से मारवाड़ी राजस्थानी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घम है । मारवाड़ी भाषा से राजस्थानी की साहित्यिक भाषा रही है और डिमर का मूलभाषा भी मारवाड़ी ही है ।

#### ऐतिहासिक विकास—

प्राचिन भाषाओं का आदिमान सामान्यतः १०० ई० के पास-पास माना जाता है जिसकी सम्पूर्ण जानकारी हमें उपलब्ध नहीं । ५०० ई० तक के कालों में बौद्ध और जैन धार्मिक साहित्यों में एक माटक आदि में प्राचीन प्राकृत मिलती है ।

प्राकृत के बाद अपभ्रंस का उदय हुआ जिसमें सिद्धा गया काफी साहित्य इन दिनों खोज निकाला गया है । प्राकृत से अपभ्रंस जैसे विकसित हुई और इसी प्रकार अपभ्रंस से प्राचिन भाषाएँ किस प्रकार विकसित हुई इस सम्बन्ध में अभी पर्याप्त प्रकाश नहीं पड़ पाया है ।

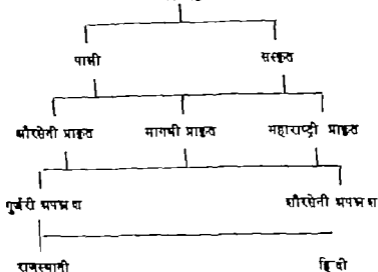
अपभ्रंस के कई संकेत उपलब्ध का पता चलता है । प्राकृत चरित्रों में अपभ्रंस के २७ संकेत बताये गये हैं । विक्रम की दृष्टि से प्यारही काली तक देश में अपभ्रंसों का प्रचार रहा । तत्पश्चात् प्राचिन भाषाओं से उनका स्थान-ग्रहण कर लिया । ठीक जैसी प्रकार जैसे प्राकृत का स्थान अपभ्रंस भाषाओं में लिया था ।

राजस्थानी भाषा का सम्बन्ध गुर्जरी अपभ्रंस से माना गया है । इसी गुर्जरी अपभ्रंस से राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति हुई जिसका एक रूप प्राये जाकर 'डिमर' नाम से विख्यात हुआ ।

१ डा० श्रीतीलाम वैजाविया ने राजस्थानी का संघ-युक्त निम्न प्रकार से दिया है—

भाषा-शास्त्र

वैदिक-साहित्य



राजस्थानी

हिंदी

यह बताना कठिन है कि राजस्थानी का उद्भव किस समय हुआ ? अनुमान किया जाता है कि ११ वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में अपभ्रंश से पुनर्जागरण होकर इसने स्वतंत्र भाषा के रूप में विकसित होना प्रारम्भ किया होगा।

राजस्थानी के विशेष लक्षण या गुण—

सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डा० मुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने राजस्थानी भाषा के जो विशेष लक्षण मनाये हैं, उनमें से कुछ की संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार से है

(क) उच्चारण सम्बन्धी

१ 'भ' का उच्चारण 'ह'

जैसे मनुष्य का मिला सरदार का सिरदार।

२ इसके विपरीत—इ-कार व उ-कार के स्थान पर भ-कार का उच्चारण।  
जैसे दिन का इन मिल का मल।

३ मूर्धन्य 'ख' और 'क' राजस्थानी की दो विशिष्ट ध्वनियाँ हैं  
मूर्धन्य 'ङ-ङ' ध्वनियों की और राजस्थानी का विशेष आकर्षण है।

४ कुछ ध्वनियों में च, छ, ज, झ, ताम्र्य ध्वनियों का उच्चारण दम्य सुनाई देता है। साथ ही 'स' की ध्वनि 'ह' हो जाती है।

साधारण राजस्थानी और बिगल में समय बँटा ही घटर है वँसा साधारण ब्रजभाषा और पियत में है ।

पन्दरबाई कृत 'पुष्पीराज रासो' और महाकवि सूर्यमल का 'बंशभास्कर' भाषा की दृष्टि से अपने पृथक अस्तित्व रखते हैं । 'पुष्पीराज रासो' में राजस्थानी की प्रपेक्षा ब्रजभाषा की विशेषताएँ अधिक हैं लेकिन बधमास्कर राजस्थानी (डिगल) के अधिक समीप है ।

डॉ० टीवीटीपी ने डिगल के दो रूप माने-

- |                    |   |
|--------------------|---|
| १ प्राचीन डिगल—    | } १३ वीं शताब्दी के समय से १७वीं शताब्दी के मध्य तक |
| २ अर्धप्राचीन डिगल |   |
|                    | } १७ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से आज तक की डिगल      |
|                    |   |

उन्होंने उपरोक्त दोनों वर्गों की डिगल में कुछ भेद भी गिनाये हैं ।

पश्चिमी राजस्थानी अर्थात् मरुभाषा या मारवाडी के साहित्यिक रूप को 'डिगल' नाम दिया गया है । जारण भाट, राज मोतीसर, डाडी मारि जातिवाँ डिगल रचना से विशेष सम्बन्धित रही है ।

स्पष्ट किया जा चुका है कि 'डिगल' बोलचाल की राजस्थानी से पृथक् एक साहित्यिक भाषा रही है । वह राजस्थानी से भिन्न कोई भाषा न होकर 'राजस्थानी' की ही एक काव्यगत वँसी विशेष है । साधारण राजस्थानी और डिगल में मुख्य घटर या तो सम्भावनी वा है या सम्भा की बर्तनी का व्याकरण का घटर सर्वथा मय्य है ।

भाषा का विकास—

राजस्थानी भाषा के विकास को दो कालों में बाँटा गया है—

- १ प्राचीन राजस्थानी काल-सं० १६०० से पूर्व
- २ नवीन राजस्थानी काल सं० १६० के पश्चात्

प्राचीन राजस्थानी काल में मुजराठी व राजस्थानी एक ही भाषा थीं । कालहर्षी शताब्दी से के पृथक रूप में विकसित होने लगी ।

नवीन राजस्थानी को प्राचीन से पृथक करने वाली कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

- १ 'ड' और वी स्वर का विकास
- २ बर्तनी या द्विगुं में 'अइ' अउ' के स्थान पर 'अ' और वी का प्रभाव

- ३ मान्यतर जाति (नपुंसक लिंग) का उठ जाना ।  
 ४ शब्दों के अंत में 'इ' 'उ' और 'घ' के उच्चारण का लोप ।

इस परिच्छेद की सहायक पुस्तकें निम्न हैं—

- |                                |                            |
|--------------------------------|----------------------------|
| १ राजस्थानी साहित्य (एक परिचय) | —प्रो० नरोत्तमदास स्वामी   |
| २ राजस्थानी भाषा और साहित्य    | —डा० मोतीलाल मेमारिया      |
| ३ राजस्थानी भाषा               | —डा० सुनीलकुमार चाटुर्ज्या |
| ४ हिन्दी साहित्य का आधिकारिक   | —डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी  |

—राजस्थानी साहित्य-परम्परा

डा० ह्याटिन्सन डिप्रेरी ने लिखा है कि १० वीं शताब्दी के उत्तर पुबराणी और राजस्थानी के अतिरिक्त अन्य किसी भी भाषा की कोई रचना हुई भी हो तो उसका प्रायोगिक रूप नहीं प्राप्त मालूम होता।<sup>१</sup>

हिन्दी भाषा के आदिकाल की ओर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि हिन्दी के बनेमान् स्वयम्भू के निर्माण से पूर्व कथा और दोहा-मार्गिक का उत्पन्न-आगम की प्रायः सभी दली भाषाया में आकाश था। उस समय की हिन्दी और राजस्थानी में इनका आगम नहीं हो पाया था किन्तु आजकल है। यदि यह सही बात है कि वे एक ही थीं तो अशुद्धि नहीं होगी।<sup>२</sup>

यह भी बताया जा चुका है कि राजस्थानी साहित्य का पविष्ठ सम्बन्ध एक ओर हिन्दी से है तो दूसरी ओर पुबराणी में। कभी कभी एक ही रचना को एक विद्वान् 'पुबराणी राजस्थानी' कहता है तो दूसरा 'दुनी पुबराणी' कह देता है।

मनु ईस्वी की १० वीं से १४ वीं शताब्दी तक के काल को हिन्दी साहित्य का 'बीरवाबा-काल' या आदिकाल कहा जाता है। यह समय विशेष तथा ऐतिहासिक कालों का है। डा० ह्याटिन्सन डिप्रेरी ने लिखा है कि ऐतिहासिक स्थितियों पर 'अरिष्ट-काल' काल का प्रथम ७ वीं शताब्दी से मिलता है।<sup>३</sup>

डा० मैनारिखा के अनुसार आदिकाल का अन्तर्गत साहित्य राजस्थानी में मिलता है उतना अन्य किसी प्राचीन भाषा में नहीं मिलता।

राजस्थानी साहित्य के उत्पन्न में डा० मैनारिखा की 'आदिकाल' को 'बीरवाबा काल' नहीं मानते क्योंकि इस काल के साहित्य-सूत्र में सर्वाधिक योगदान जैन मनीषियों का रहा है। यह सुझाव है कि अतिरिक्तियों-बहुत कई जैनिक रचनाएँ लभ्य भी हो गई हैं और जो कोई बहुत कभी यह नहीं के भी अभी प्रकाश में नहीं आ पाई।

१ हिन्दी साहित्य का आदिकाल—द्वितीय आस्वान।

२ 'मोना-मार्ग' या दोहा — अन्वय-सीमा।

३ ह्याटिन्सन डिप्रेरी।

उसी ग्रन्थ, जिनके आचार पर भादिकाल को बीरगाथा-काल कहा गया है राजस्थान के किसी समय विद्येय की साहित्यिक प्रवृत्ति को भी सूचित नहीं करते। वं केवल चारणों और भाटों आदि की जन्म-जात मनोवृत्ति को ही प्रकट करते हैं।

यद्यपि प्राचीन राजस्थानी साहित्य को मात्र बीर-भूषा या बीर-प्रसस्ति का साहित्य माना जा रहा है। उसकी ग्रन्थामय सिद्धियों की उपेक्षा करना होगा।

राजस्थानी साहित्य जनता का साहित्य है। सत्य है कि राजस्थानी साहित्य सरस्वती के एक हाथ में बीणा है तो दूसरे में तमबोर, लेकिन जनता के जीवन के नानारंगी चित्र उसमें प्रचुर मात्रा में मिलेंगे।

जनता के सुख-दुःख भाषा-निराशा उमंग-आशा हास्य-रुदन सभी का उसमें मार्मिक प्रकट हुआ है।<sup>१</sup>

फिर भी, बीरता राजस्थानी-साहित्य का सर्वाधिक विद्युत् गुण है।

स्व० भवन मोहन मानवीय ने एक स्थान पर कहा है

‘राजस्थानी बीरों की भाषा है। राजस्थानी का साहित्य बीर-साहित्य है। सभार के साहित्यों में उसका निराशा स्थान है। वर्तमान-काल के भारतीय नवयुवकों के लिये तो उसका अत्यन्त परिचर्य होना चाहिये।

ग्रन्थकालः—

ग्रन्थकाल में आकर ‘राजस्थानी’ और ‘गुजराती’ दोनों भाषाओं ने अपने पुरक अस्तित्व बना लिया।

इस काल के कवियों के मुख्य विषय-शृंगार, भक्ति और कीर्ति-कवय रहे। ‘बोसा माक रा बोहा’ और ‘बेनि जिनन झमली री’ इस काल की राजस्थानी की श्रेष्ठतम उपसम्भियाँ हैं। दोनों ग्रन्थ जिनम के हैं जो शृंगार रस की दृष्टि से अत्यन्त हैं।

भक्ति के क्षेत्र में मीराबाई और ईसरवास के नाम उल्लेखनीय हैं।

राज्याधित जाठियों के कवि ‘बीरपूजा’ के साथ ही बन्धे रहे, जिनका कोई उच्च-कोटि का ग्रन्थ देखने में नहीं आता।

सन्त शाहू के अनुयायी कवियों ने भी राजस्थानी साहित्य को समृद्ध किया।

‘बेनि जिनन झमली री’ के रचयिता पृथ्वीराज (सं० १६०६-सं० १६२७) द्वियम (राजस्थानी) के बड़े प्रतिष्ठ कवि हैं। पृथ्वीराज रचित अन्य रचनाओं

१ राजस्थानी साहित्य एक परिचय— प्रो० गरीबदास स्वामी।



का उल्लेख भी मिलता है यथा—१ बसम भाषणत रा वृद्धा २ मंगा लहरी  
३ बसवेरावउत ४ बसरप रावउत ।

सं० १७०० से १९०० तक के उत्तर-मध्यकाल में भी भाषा घोर साहित्य की दृष्टि से राजस्थानी साहित्य की गौरव बृद्धि हुई। डा. मेनारिया इस काल को राजस्थानी का स्वर्णकाल कहते हैं।

'मुहंछोठ मैणासी री क्वात' के रचयिता मीलसी 'मूरखप्रकाश' के रचयिता करणीदास भाषा मारण के रचयिता जैन श्री महाराज मानसिंह कविराज बांकीदास श्रीदास आदि इसी काल के साहित्यकार हैं।

**जैन साहित्य—**

राजस्थानी का जैन साहित्य भी अनेक रूपों में मिलता गया है।

जैसे—(क) प्रबन्ध कथा रास रासो भास चौपई।

(ख) फाव बाटूमासा भीमासा।

(ग) वृद्धा गीत बबस गजस।

(घ) संवाद मातृका स्तवन सगन्धाय।

(ङ) पट्टावनी नुवावनी बड़ी दण्ठर, पथ।

(च) बामाव बोध आदि।

बख्खेण सूरि शासिभद्र सूरि, जिनपचम्र जिनपद्म सोमसुन्दर, कुचल्लाम समयसुन्दर, जिनसमुद्र सूरि जिनहर्ष बसरराज उदयरराज आचार्य जयभिक्षु (तेरापंजी) आदि कई जैन आचार्यों ने राजस्थानी साहित्य को कई बहुमुख्य रचनाएँ दीं।<sup>१</sup>

लौकिक साहित्य के अन्तर्गत 'स्वमन्त्री-मंगल' और 'नरसी बी रो माहेरो' रचनाएँ भी राजस्थान में काफी लोकप्रिय हुईं।

जगत सिरोमणि मीरबाई के प्रतिरिक्त जगजसोबी और बस्तावरजी के पद राजस्थानी भक्ति साहित्य की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं।

## ५ गद्य—साहित्य

राजस्थानी और गुजराती गद्य की परम्परा हिन्दी से अधिक प्राचीन है।

'राजस्थानी का प्राचीन गद्य प्रभूत भाषा में पाया जाता है। ऐसी प्रचुरता

१ राजस्थानी साहित्य—प्रो. नरोत्तमदास स्वामी।

असमिता को छोड़कर भारत की अन्य किसी भी भाषा में नहीं मिलती। असमिता भारत की श्रेष्ठतम भाषा है तो राजस्थानी पारभाष्यतम।\*

श्री अणवरत्न नाहटा के अनुसार तीन मञ्जरों की कई हस्तलिखित प्रतियों में १५ वीं शताब्दी तक के राजस्थानी पद्य के नमूने मिलते हैं।

धनुमानत राजस्थानी पद्य का प्रारम्भ ठेकरवीं शताब्दी से हुआ। चौदहवीं शताब्दी की जो पद्य रचनाएँ मिली हैं वे भाषा और शैली की दृष्टि से युष्क हैं और यह कहा जा सकता है कि यह पद्य प्रारम्भिक स्थिति का न होकर विकास की स्थिति का है।

राजस्थानी पद्य और पद्य दोनों के विकास में जैन विद्वानों का विशेष हाथ रहा है यद्यपि वे रचनाएँ साहित्यिक से पहले धार्मिक ही हैं।

राजस्थानी पद्य की कई जैनतर रचनाएँ भी प्राप्त हुई हैं। पट्टे-मरवाणों और ठाण्डपत्रों में भी राजस्थानी पद्य के सुन्दर नमूने मिलते हैं।

राजस्थानी का अधिकांश प्राचीन पद्य जैन लेखकों का सिद्धा हुआ है। संभारसिंह की काम प्रिया और कुल-मंडल के 'भुग्बाबबोध-श्रीकितक' में राजस्थानी का प्राचीनतम पद्य मिलता है।

जैन साधुओं की एक सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि उन्होंने धर्मपत्रों के लिये लोक भाषाओं को माध्यम बनाया। फलतः राजस्थानी में कई धर्मकथाएँ भी लिखी गईं।

तस्सुप्रभ राजस्थानी के प्रथम प्रौढ गणकार माने जाते हैं। सोमसुन्दर सुरि, मेरुसुन्दर पादसंताब माणिक्यचन्द्र सुरि जैसे विद्वानों ने भी राजस्थानी पद्य को अपनी प्रीति इतिहास की है।

राजस्थानी पद्य साहित्य में ऐतिहासिक पद्य की भी प्रचुरता है। राजस्थानी-रचनाओं में पद्य के कई रूप मिलते हैं, जैसे—

- |               |                   |            |
|---------------|-------------------|------------|
| १. वात        | २. स्वात          | ३. बंधावली |
| ४. पीड़ियावली | ५. पट्टावली       | ६. विमत    |
| ७. हकीगत      | ८. हास्य          | ९. पाद्य   |
| १०. कचनिका    | ११. दवावेत-ध्यादि |            |

कचनिकाओं में निम्न दो अत्यधिक प्रसिद्ध हैं—

१. अचमदास लीची वी कचनिका—(अचमदास)

१. राजस्थानी साहित्य—प्रो० कठोत्तमदास स्वामी ।

९ राठीइ रतनसिंह 'महेशशासित री यपनिका' (छटिया जग्गा)

पबाईतों में 'भाट मानीदास नरसिंह'ग गौड री बबावैत' प्रमिठ है ।

रवाठ सेसका में मुहुगात नेगमी बपातबास और बांवीदास के नाम बिघेप उल्लेखनीय है ।

बाठा और कहानी साहित्य भी राजस्थानी गद्य का महत्वपूर्ण ग्रंथ है । धर्म नीति बीरता प्रेम राजा प्रजा रेषता-भूतप्रेत और डाकू आदर्शवाद पर्यायवाद सोफ कबाएँ-कसाटुतियाँ आदि सबनों पर प्रभावित गहुरीं बाठाएँ मिलती हैं ।

राजस्थानी-गद्य के ही समान राजस्थानी-गद्य की परम्परा भी बड़ी पुरातन और प्राणवान है ।

### नवजागरण-काल और महाकवि सूर्यमल्ल

धार्मिक के इतिहास में राजस्थान को बीरभूमि कहा गया है । बीरता और धीर्य की यह बिरासत हमारी संस्कृति का प्रसंकार है लेकिन राजस्थान में रजबाई के इतिहास की सामन्तवादी संस्कृति राजस्थान के जनजीवन का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करती । यहाँ इस तथ्य से प्रबन्ध इन्कार नहीं किया जा सकता कि सामन्ती संस्कृति ने भी राजस्थान के जनजीवन को काफ़ी दूर तक प्रभावित किया है । विवाह के प्रबन्ध पर हर दूस्हे का ठलवार बांधना हापी-योडों और छछरन सैमिकों के मिठि बिन्न, बरबारी संस्कृति के प्रभाव के सूचक हैं । लेकिन राजघाही के प्रतीक साम्बाधित धर्म का जीवन लक्षणीय सामान्य जनजीवन की कोटि में नहीं जाता । सामान्य समाज और सामन्ती समाज के बीच प्रारंभ से ही एक बहरी बरार रही जो क्रमशः और घबिक गहुरी हावी बनी गई ।

कारण स्पष्ट है कि बीरपूजा के आस्थापीस जनभावना ने राजाओं और सामन्तों के ऐश्वर्य एवं धीर्य का बर्णन करते रहने में ही अपने कर्तव्य की इतिथी समझी । सामान्य जनजीवन राजस्थानी काव्य का प्रबलम्ब नहीं बन पाया फलतः एक ओर रसुधेन रं छाका और नीहुर की आला बलती रही तो दुसरी ओर सामन्ती बिवास की घतरबारा के रूप में राजाओं और बाबबियों की संख्या बढती गई । प्रतापी राजा की संता य शासनधर्म पर नर मिटने वाले सैमिकों के बनिबाला ही पाया ठो धमर हो गई, लेकिन उस धनबध्द संघर्ष की प्रतिबिम्बा-स्वरूप राजस्थान में जो सामाजिक और धार्मिक प्रबन्धस्था फेसी बसकी ओर बरतो तक राजस्थानी कबिबा का ध्यान धाकर्षित

नहीं हुआ। राजपूत जाति का ऐश्वर्य उसके साक्षर्य-भासन और बृह प्रतिज्ञता के कारण इतना जैसा इतना जैसा कि चारणा बाखूठों राजों और अन्य वन्धीजनों ने कमाई के अन्न से पसकर भी अपने को राज्यायित समझ लिया। उन्हें राज दरबारों में भाष्य भी मिला लेकिन सदा और साक्षर के प्रति उन कवियों की आस्था इतनी बड़ी कि राजपूत राजाओं को सैकड़ों वर्ष तक हिन्दुओं के सूर्य की ही मान्यता प्राप्त होती रही। ईस्वीय सत्ता के सिद्धांत की यह स्वीकारोक्ति काफ़ी दूर तक राजस्थानी कवियों में पाई जाती है जो प्रागे जाकर इतनी बड़ हो गई कि किसी अन्य मान्यता या अभिव्यक्ति को काव्य का सम्मान मिला ही नहीं।

भारतीय साहित्य के प्राभुतिक या नवजागरण-काल का आरम्भ पश्चिम के सम्पर्क के साथ होता है। राजस्थानी साहित्य भी इसका प्रभाव नहीं। प्रेमी शिक्षा और संस्कृति से साक्षात्कार के फलस्वरूप भारतीय जनजीवन की विभिन्न स्थितियों में जो परिवर्तन आये यहाँ उनका सिद्धान्तोक्तन प्रभासित नहीं हुआ।

### राजनैतिक स्थिति —

राजनैतिक दृष्टि से यह समय गहरी उपल-युक्त का था। भारत का सम्पूर्ण राजनैतिक प्रमुख राजा राजा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों में अना गया, अतः विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने के नाम पर सम्पूर्ण देश एक भावनात्मक इकाई में बंध गया। यद्यपि उस समय में क्रियाशील शक्ति काफ़ी विलम्ब से आ पाई।

सन् १८५७ का आन्दोलन जिसने बेग से सठा उतनी ही तीव्रता से कुचल भी दिया गया। तत्पश्चात् भारत का शासन सात समुद्रों पार की महारानी विक्टोरिया के सीधे प्रशासन का अंग हो गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों से शासन-सूत्र छीनकर ब्रिटेन की महारानी ने जातिमेव उठा देने और पार्लिमेंट क्षेत्र में सभी को समान स्वतन्त्रता देने की सुधारवादी घोषणाएँ की। देश में सुधारवादी भावना का बेग बढ़ा।

सांस्कृतिक सम्पर्क की दृष्टि से भी उस समय भारत और ब्रिटेन प्राथमिक निष्कट प्रागे लगे थे इसलिये देश में राजनैतिक चेतना भी बढ़ने लगी। 'बैन स्टुअर्ट मिस' जैसे पत्रकार्य विचारकों के सम्पर्क से राजनैतिक अभिकारों की भी भांग बढ़ी।

सन् १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई लेकिन प्रारम्भ

में मन्म पत्र का प्रमुख रहा। फिर बंगाल के विभाजन (बंग बंग) के प्रश्न पर देश भर में चेतना की महार-मी बौध मई। बंग-अंग को एक करने के दो हुकूम कर देना समझ गया जिसने परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय भावना को बल मिला। देशवासियों ने इस दायित्व को महसूस किया कि भारत एक अविभाज्य राष्ट्र है जिसके अस्तित्व की रक्षा हर मूस पर की जानी चाहिये। कांग्रेस में भी अब लोकमान्य बास नंगाधर तिलक जैसे व्यक्ति का पदार्पण हुआ।

सन् १९०१ में जापान ने रूस जैसे शक्तिशाली राष्ट्र को पराजित किया तो भारतीय जीवन पुनः अपनी सामर्थ्य को परखने तथा और महारमा गांधी के असहयोग आन्दोलन को देश की चेतना का भारी समर्थन मिला।

द्वितीय विश्वयुद्ध तक तो भारत का बच्चा बच्चा स्वतन्त्रता के स्वल्प और उगड़े महार से परिचित हो उठा। ब्रिटिश शासन भारतीय जनता की भावनाओं को कुचमत्ता रहा और नाबतार्ण बढ़ती रही।

बिदेगी बन्धन से भारतीय प्रभुमत्ता का मुक्त कर देने का एक और साहस भरा प्रयत्न सन् १९४२ में हुआ जब देश ने तबयुक्त बसन्ती मोस की माग करने लगे। जब यह अति बबाई गई तो श्री सुभाषचन्द्र बोस और उनकी 'आत्राव हिन्द फौज' ने राष्ट्रीय चेतना की ज्योति को जलागे रखा।

प्रगत ब्रिटिश संसद और मन्त्रिमण्डल की समझ में यह बात बँठी कि जब इस चेतना को कुचल पाता असम्भव है, और १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत ने राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली।

लगभग सम्पूर्ण शताब्दी की राजनीतिक संकल-मुचल ने राजस्वानी के समकामीन मेसकों को नये दायित्वों से परिचित कराया। समकामीन रचनाया में इसके उदाहरण भी मिलते हैं।

**सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति—**

हिन्दू समाज व्यवस्था को गल कई शताब्दियों से अस्तित्व सम्पत्ता से लड़ रही थी जब अदेजी सम्पत्ता की टनकर में बाई। सब हिन्दू-समाज-व्यवस्था अत्यधिक अटल और अम्यवस्थित हो चुकी थी। बाति और सप्रदाय की विभिन्न इकाइयों में अकल का कोई लुभ डूड पाता अटल बा। कई सामाजिक कुटीरियाँ और कुप्रपाएँ जर्म की अकलमा में पनप रही थी।

पारशात्य संस्कृति से समन्वय की लड़ी में भारतीय मानस ने अपनी दुर्बलता को पहचाना और उसके प्रायश्चित में अुट गया।

बंगाल में राजा राममोहन राय और उत्तर-भारत में स्वामी दयानन्द ने परम्परा की संकीर्णताओं पर चुन्नी बोट की। स्वामी दयानन्द ने वेदां और उपनिषदों का सच्चा ज्ञान दिया। राजस्थान के कई राजा भी स्वामी दयानन्द के प्रभाव में थे।

देश में सुधारवादी आन्दोलन बढ़े। विधवा विवाह स्त्री-शिक्षा और मातृशिक्षा की विद्या में प्रमत्त हुए। नागरिकों को सम्मान प्रतिष्ठा दिवाने के इन आन्दोलनों ने सम्पूर्ण राष्ट्र को एक संगठन-सूत्र में बाँध दिया।

धार्मिक क्षेत्र में उन दिनों असन्तोष बढ़ता जा रहा था। भारत के सम्पूर्ण बाजारों में र्थप्रेमी भाव विकर रहा था और स्वदेशी कल-कारखानों को जय मज गया था। देश का औद्योगिक विकास बिसकुल रुक गया था और भारत की प्रविष्टियाँ जनता कृषि पर प्रबलबलित रह गई थी।

धार्मिक शिक्षा ने भी हमारी प्राचीन शिक्षा-पद्धति को प्रभावित किया और हमारे साधने विचारने की दृष्टि ही बदलती चली गई।

भारत की राज्य-भाषा अंग्रेजी बन गई। उर्दू को भी प्रथम भारतीय भाषाओं की तुलना में विशेष प्रथम भिन्ना और यही से हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने का आन्दोलन चला।

इस प्रकार देश के साहित्य और विचार पद्धति पर पाश्चात्य चिन्तन विधि का विशेष प्रभाव पड़ा।

### सांस्कृतिक जीवन—

ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि अंग्रेजी शासन में आते ही भारतीय संस्कृति परिवर्तन के सम्पर्क में आने लगी। लेकिन उस समन्वय की स्थिति किञ्चित् दुर्भाग्यपूर्ण भी रही। एक तो इसलिये कि अंग्रेजों की पराधीनता में अपना अस्तित्व बचाते-बचाते भारतीय संस्कृति सिध्दित पड़ चुकी थी। दूसरे इसलिये भी कि भारतीय जीवन उस पाश्चात्य प्रभाव को उदारतापूर्वक ग्रहण कर पाने की स्थिति में नहीं था। कारण स्पष्ट है कि अंग्रेजों और भारतीयों में शासन और साधित का सम्बन्ध था। अंग्रेजी शासन के प्रति असन्तोष की प्रतिबिम्बा-स्वरूप भी भारतीय के प्रति और अधर्मीय के प्रति निर्भय की भावना बढ़ी। फिर भी भारत की सांस्कृतिक जगत में पाश्चात्य सांस्कृतिक चेतना के सम्पर्क से नया प्रकाश पैदा और उसे अपने अस्तित्व एवं सामर्थ्य का मान हुआ। उसकी महत्वाकांक्षाएँ भी बढ़ीं।

## धार्मिक स्थिति —

धार्मिक जगत में बिरोध महत्वपूर्ण जैसी कोई बात नहीं हुई, लेकिन धार्मिक भाव्यताओं को नई रोज़नी से परखने की प्रवृत्ति ने जोर पकड़ा। धर्म-समाज के तर्क और विवेक ने धर्म-विश्वासों का भ्रूणभार दिया। बंगाल के ब्राह्म-समाज मद्रास की बिरोधोत्प्रेरित सोसाइटी और मल्लिक ने क्षेत्र में रामास्वामी सम्प्रदाय ने धार्मिक भाव्यताओं को नये परिवेश में संचारा।

पारंपारिक साहित्य के सम्पर्क में आने से ईश्वरीय सत्ता के बड़े बड़े सिद्धान्त अमान्य करार दे दिये गये। भाव्यवाद के धर्मरम्य धारावाद ने सक्रियता का स्वरूप धारण किया। नई जेतना और नया उत्साह दृष्टिगोचर हुआ।

## धार्मिक-प्रभाव—

धार्मिक भावित्यों से समृद्ध पारंपारिक संस्कृति जीवन और साहित्य के सम्पर्क में आने से भारतीय मानस में यथार्थवादी भौतिक जीवन-दृष्टि का विकास हुआ। आचार-विचार सामाजिक-भावनाओं और शिक्षा-शिक्षा के साथ-साथ भाषा और साहित्य पर यह प्रभाव अत्यधिक पड़ा।

हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के धार्मिक साहित्य की सबसे बड़ी सिद्धि यह है कि इस काल में गद्य साहित्य का सूत्रपात और विकास हुआ। युजन की यह नई विचारों भी अंग्रेजी साहित्य-शैली से सीधी प्रभावित हैं। हिन्दी-साहित्य में यह प्रभाव पहले बंगला भाषा के माध्यम से आया तत्पश्चात् धार्मिक-साहित्य उसके सीधे सम्पर्क में भी आ गया।

मुद्रागत भी विविधकाल की ही बेग है। ईसाई मिशनरियों ने भी पारंपारिक धार्मिक ग्रन्थों को हिन्दी में अनुबाधित करके प्रकाशित किया जिससे हिन्दी के संघटन को काफी बल मिला।

हिन्दी काव्य में रोमांटिक भाव का प्रवेश भी धार्मिक-साहित्य की ही प्रस्ता है। धर्म नई-सर्व और नीदर जैसे कवियों का हिन्दी के आचारवादी काव्य को बहुत बड़ा योगदान है।

इस समन्वय काल में भारतीय विचारधारा का अवरोध मंजूर हुआ। उसमें सकीलता के स्थान पर नवीन उदार और ध्यापक भावनाओं का जन्म तथा प्रसार हुआ।

## हिन्दी और राजस्थानी साहित्य—

हिन्दी में धार्मिक युग की पूर्ण परम्परा में रीति युग आता है। रीतिकाल की आसक्ति और विवेकी आसन के प्रति विरोध के रूप में ही धार्मिक

काल की स्वीकारा गया है, लेकिन राजस्थानी काव्य के संदर्भ में विद्रोह का उष्ण पूरा पूरा भेद नहीं आता।

समय तो बढ़ता लेकिन राजस्थानी साहित्य की अपनी परम्परा के प्रति विद्रोह करने की आवश्यकता नहीं थी। विमल और विदल—दो साहित्यिक धाराओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह निर्यय से पता चलता नहीं कि मात्र विमल की धारा ने ही विकृति की स्थिति में 'रीठिकाल' को जन्म दिया। विमल-काव्य धारा का धावर्त दूसरा था। वह बीरता के साथ बंधी रही। उसमें तो मात्र इतने से विकास की अपेक्षा थी कि उसकी पूजा का प्रतीक बदल जाय भयंकरा उसके मिये नये युवधर्म को प्रहृष्ट कर पाना भयंकर कठिन था। बीर प्रवृत्ति का रेकार्ड बिसते-बिसते काफ़ी पुराना पड़ गया था, लेकिन उसमें नये स्वर नहीं भरें जा रहे थे। उसे इस स्थिति से दामे बढ़ना था। इसलिये राजस्थानी का आधुनिक काल परम्परा के प्रति विद्रोह न होकर परम्परा की मिसि पर नये अभियात का सुभपात और तबनन्तर उसका विकास ही माना जाना चाहिये।

विद्रोह की बेतना का स्पर्ध या आभास सरसता से हो आता है लेकिन कमजोर विकास को समझने के लिये स्पष्ट विभाजन-रेखा खींच पाना आसान नहीं। मेरी अपनी समझ में राजस्थानी काव्य की मही विधेयता उसे त्वरित मुस्वाकल के लखों में नई भाव या आधुनिकता की मान्यता प्राप्त नहीं करा सकी।

व्यापक परिपामर्भ में देखने से पता चलता है कि उसीसर्षी धरी का पूर्वार्ध समाप्त होते होते समूची भारतीयता को एक संपन्न-सूत्र में बांधने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्र-भाषा के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी इसीलिये साहित्य के आलोचक भयं भारतीय भाषामर्भ के विकास का पलन की साखी में बड़े भी नहीं रहे पाये। भयंकरा वह समझ पाना कठिन नहीं था कि राजस्थानी-काव्य में नई बेतना की फिरलें भाष के एक अताखी पूर्व से ही विद्यमान हैं।

**आधुनिक काल की सीमा:—**

भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना तथा परिषद के ज्ञान-विज्ञान के सम्पर्क के साथ ही भारतीय साहित्य ने नया मोड़ मिया। किसी दूसरी संस्कृति और भाषा के प्रभाव में जाने से काफ़ी लम्बे समय तक भारतीय साहित्य अपना पृथक अस्तित्व नहीं बना पाया, फिर ना हिन्दी नर अंग्रेजी,



कार्तीय और उर्दू भाषाओं का जितना स्पष्ट प्रभाव पड़ा राजस्थानी में उस सीमा तक अपने अस्तित्व को परिवर्तित नहीं होने दिया ।

राजस्थानी साहित्य के गोप-कर्ताओं और आलोचकों में राजस्थानी साहित्य का प्रापुनिक काल सं० १९०० से ही माना है अर्थात् सन् १९५७ के भारतीय स्वाधीनता-संग्राम की जतना को ही प्रापुनिकता की प्रकृति किरण माना जाना उपयुक्त ठहरता है ।

सत्कामीय राजपूताने को एक साथ कई संपर्कों से जूमना पड़ा । छोटे बड़े राजाओं और जागीरदारों का प्रापनी रूप उतना प्रातरिक संपर्क रहा जा सकता है । और किरंयी के प्रासन में मुक्ति पाने का प्राश्लोसन उतका बाह्य संपर्क । एक और तो विभास की सहाय्यता में पड़ी-पड़ी उतकी तसकारें पंथ सा कई और उतका प्रातरिक सुर्भम पड़ गया । दूसरी और प्रापनी रूप और बीमनस्य में राष्ट्रीय वेतना और अरिज को पतित किया ।

तीसरी और, मुय की पति के साथ बढ़ते जा रहे अरेजी साम्राज्य और मरूठा प्राक्रमणों से पीडित पतनोगुप्त सामन्ती सभ्यताओं के सिधे अपने अस्तित्व तर को बनाये रचना प्रास्यन्त अठिन हो गया । राजस्थान में इसी समस्यावधी में काडी प्रागे आकर साहित्य में प्रापुनिकता को जन्म दिया और प्रथम भारतीय स्वाधीनता संग्राम (सन् १९५७) की आगरण-वेतना में महाकवि सूर्यमस्त ने राजस्थानी काव्य की नई समस्यावधी का द्वार खोल दिया । नई खोज रिपोटों से पता चलता है कि सन् १९५७ के आठवरेस में राजस्थान के जयपम सभी कवियों में साम्राज्यवाद के विरुद्ध प्रापनी आवाज उठाई है । 'परम्परा' असासिक के 'मोरा-कुटजा' पक में उत कई कवियों की अोजस्वी कविताओं से सातात्कार कराया गया है ।

पूथक प्राराओं का समय —

पूर्व पंक्तिर्मा में यह स्पष्ट किया जा चुका है कि प्रापुनिक राजस्थानी काव्य पूर्व-परम्पराओं को चुनौती न होकर उतका विकास मान है और सूर्यमस्त का इतिल इसका साजी है । सूर्यमस्त स्वयं को पूथक प्राराओं के मुहाने पर खड़े है । परम्परा और प्रापति की इन दोनों प्राराओं पर सूर्यमस्त का समान प्रभाव इष्टिगोचर होता है । एक परम्परा से बची रहकर ही उसे परिष्कार प्रदान करती जा रही है तो दूसरी नई वेतना नई प्राजिअपित और नये मुयसत्य को लेकर प्रापनी वेतवती आठ को निरन्तर विअसित करती चली जा रही है ।

सूर्यमस्त की चर्चा करते समय बार-बार यह दुहराया जाता रहा है कि सूर्यमस्त ने तत्कालीन कविओं की मौसिकता का मूट कर दिया था। जब सूर्यमस्त का प्रभाव कम पड़ा तो राजस्थानी काव्य ने अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाया। कहा जा सकता है कि सूर्यमस्त ने जिस चेतना को जिस सामर्थ्य से संभाला वह भाते वाले कई वर्षों तक अन्य कविओं द्वारा उतनी सामर्थ्य से नहीं संभाली जा सकी। यह कोई प्राश्न्य की बात नहीं क्योंकि सूर्यमस्त जैसे प्रतिभा के घनी किची भी भाषा को सरसता से प्राप्त नहीं हो पाते।

### महाकवि सूर्यमस्त —

जन्दीवाल के पुत्र महाकवि सूर्यमस्त वि० सं० १८७२ में जन्मे और वि० सं० १९२५ में स्वर्गवासी हुए। उन्हें स्वतन्त्र प्रकृति के प्रबल और पिपकक स्पष्टभाषी और निरंतर स्वभावसिद्ध कवि और प्रकाश पंडित के रूप में याद किया जाता है। वे संगीत-मर्मज्ञ और सौकोत्तर प्रतिभा के अधिकारी थे। आर्योचित स्वाभिमान और स्वातंत्र्य प्रम उनकी मस मस में भर था। वे पद्मपापाजानी और व्याकरण म्याय ज्योतिष आदि विषयों के पारंगत थे। उन्हें बीररस का सर्वश्रेष्ठ और विंगल का श्रेष्ठतम कवि माना गया है। अनुभूति की सरसता भावों की गंभीरता और घमिभ्यक्ति की प्राग्जलता उनके काव्य के धातुबन्धक गुण हैं। कुछ रघुभूमि सतीत्य और बीरोग्माए के विविध प्रसंगों पर उनकी सेखनी बार बार बनी है। उनकी प्रतिभा को विश्वकवि रबीन्द्र से तुलनीय मानने में आलोचकों की महत्त्वाकांक्षा अनुचित प्रतीत नहीं होती। डा० मेनारिया सूर्यमस्त को परिवर्तनकाल का सबसे बड़ा कवि मानते हैं और सं० १९०० से सं० १९३० तक के काल को 'सूर्यमस्त-युग' का नाम देते हैं।

पाँच वर्ष की आयु में ही विचाररस करके सूर्यमस्त ने 'अमरकोष के तीनों ही काण्ड तीन दिन में ही टीका सहित बंठाकर अपने गुरु को सुना दिये। शिक्षा गया है कि दस वर्ष की उम्र में ही उन्होंने 'रामरवाट' काव्य की रचना पूरी की जिसमें उनके आद्यपदाठा बूढ़ी के तत्कालीन नरेश महाराज रामसिंह के विचार और जनजाता का वर्णन है।

महाकवि सूर्यमस्त लिखित ग्रन्थ का परिचय इस प्रकार है—

- |                    |                          |
|--------------------|--------------------------|
| १ कठवास्कर (विंगल) | २ बीररससई अपूर्ण (विंगल) |
| ३ असंत विंगल       | ४ संरोमपूज               |

१ डा० मोतीलाल मेनारिया सूर्यमस्त १९२० मानते हैं।

२ बीररससई (संपादकीय)

१. सती चरित

६ रामरंजाट

७ बातु बपाबलि

८ पुटकर कवित्त-मर्षये ।

डा० मेनारिया प्रथम बार को ही उगका कृतित्व मानते हैं । मिश्र-बाबुओं ने भी मेनारिया की का समर्पण किया है ।

बंघ भास्कर को संस्कृत के महाभारत के समकक्ष माना गया जिसमें अर्धशताब्दी काल के समस्त राजाओं का संतसाबध इतिहास विद्यमान है । इसमें संस्कृत प्राकृत अपभ्रंस विंगल (बज्रभाषा) विंगल (राजस्थानी) प्रादि अनेक भाषाओं का प्रयोग किया गया है । वि. सं० १९२६ में प्रकाशित बंघभास्कर के टीकाकार बारण कुलभूपण कृष्णसिंहजी बापबपूर्वक निवेदन करते हैं कि ऐसा सत्यवक्ता इतिहासवेत्ता अभाबलि नहीं हुआ । महीं यह सम्भव स्मरलीम है कि सूर्यमस्त ने अपने आशयवाता राजा की भी भूठी प्रसंघा नहीं की चाहे बंघभास्कर का निर्माण क्यों तक रका पडा र्हा ।

बितासी बाताबरण के संस्कारों-बस के बोर मघपी वे । मघप पीकर जब वे काव्य सृजन करने लगे तो उनके मुख से अजस्र प्रवाहित काव्यधारण की बी बी लिपिकार तक नहीं निकल पाते थे । उनका सम्पूर्ण जीवन ही काव्यमय था । प्रथम पत्नी का देहान्त होने पर उन्होंने रामसान में ही, बाहभिया से पूर्व कमावन्तों के साथ निज कर गामा—

‘साडी बी-बू बट खोलो-म्हाने बाव है ।’

उनके काव्य में भावना और बुद्धि का सुन्दर समन्वय मिमता है । इतना स्पष्ट है कि उनके बुद्धि-वर्षीय पांडित्य ने कई स्वारों पर उनकी भाव-अवणता को अक्षय बना दिया है । बंघभास्कर की द्वितीय राधि बनोरध मनुस में ‘बहुधान मुख’ का एक प्रसंघ देखिये—

‘उतवेहु सम्मुख के अवेबहु महेके बग ज्यो भुके ।  
पव बेठ ज्यों मटपट्टी बरनी धमो बिलवो बुके ।  
कुमटा मिसामुख नेहें विम सेव केकन वी कवी ।  
बनसी कि मीजन वी कितेकन मुख्य नैनन वी बडी ॥

विंगल और प्राकृत मिश्रित भाषा का यह विद्याल ऐतिहासिक महाकाव्य या बम्बू ‘बंघभास्कर’ सूर्यमस्त का बंघभास्कर ही है ।

‘बीकम बरसा बीदियो मुख वी बंघ बुलीस ।  
बिहसर विष गुरु बैठ बर समय पत्तूरी छीस ॥’

चेतना के स्वर—

सूर्यमस्त रचित बीरसतसई का उपरोक्त बोधा (समय पसट्टी सोस) सन् १८३७ के स्वाधीनता संघाम की धोर संकेत है। जो स्वयं इस बात का भी साक्षी है कि वे तत्कालीन युग चेतना का प्रामास पा चुके थे धर्म्यया निकृति धर्म्य सामन्ती षड्बहुरों की सामर्थ्य को धस्वीकार करने धौर वेध की स्थिति पर कुलकर धासू बहाणे का यह साहस सूर्यमस्त को सँसे होता—

जिणु बलमूल न जावता येंद भवम गिबराब ।

सिखु बन बंबुक ठालडा ऊभम मडे धाब ।

धीर भावनाओं का मार्मिक चित्रण —

धीर सतसई के कवि को यह गौरव मिमता ही चाहिये कि सतसई के बोधा ने धपने प्रचार की सीमा के समूर्ण क्षेत्र में जातीय शौर्य संगठन बेसभक्ति धौर स्वाभिमान की मधाम जसाई। डिवल-काव्य में जो राजस्थानी-काव्य को परम्परा की बिरासत है जगमग समी पृष्ठों पर मुख की रणभेरी बजती रही है लेकिन सतसई उस धीर काव्य-परम्परा को धौर धधिक धागे बड़ा पाने में समर्थ हुई है। रणनाद तलवारों की भंकार, हाथी-जोड़ों की चिंभाड धौर हिनहिनाहट के तध्यात्मक बर्चम ठे भी धधिक एक गई बात सतसई में यह देखने को मिलती है कि उसमें धीरभावनाओं का मार्मिक चित्रण भी है, जो धीर-काव्य-परम्परा को सूर्यमस्त की ही वेग है। सतसई के धीर-काव्य की यह भाव-प्रबण्डता धीर-काव्य धारा का विकास है। धठी धौर सूरमाधों के धन्तर्मन को टटोलकर सूर्यमस्त ने उनके साहस धौर बलिदान को ही नहीं धपितु उनके हिसों की बडकनों से भी हमारा साक्षात्कार कराया है।

सतसई की भाया उठर-कालीन डिवल मानी गई है, जिसमें कहीं कहीं प्राचीन डिवल के प्रयोग भी मिलते हैं। धोब धौर प्रसाव गुण-सम्पन्न धीर सतसई में मुखधीर का बर्णन है लेकिन यह बर्णन वस्तु-प्रधान कम है धाव प्रधान धधिक। वस्तुतः सूर्यमस्त की यह धमर रचना राजस्थानी काव्य-धारा के धाधुनिक पुग का उद्घाटन करती है।

धहर के बाठाबरण में सूर्यमस्त द्वारा सिखे गये पत्रों का बडा महत्व है जिनकी विस्तृत बर्चा धीर सतसई के सपाबकों ने की है। उन पत्रों से पता चलता है कि उस स्वाभिमानी धौर स्वतन्त्र-वेता धरस्वती-मुन को स्वतन्त्रता को चेतना-ध्योषि का प्रकाश मिल चुका था। धाक्रमक फिरगियों से मुक्ति पाने धौर देश को एक संगठन-सूत्र से धाधने की बसबती धाकासा लेकर वे जीवन धर धपने धामित्व पर धडिय रहे।

## मुगांतरकारी व्यक्तित्व —

कोटा के स्वर्गीय बहिराज मरानीचानबी महियारिमा ने उनकी मृत्यु पर जो मञ्जुशक्ति व्यक्त की है वह इस प्रकार है— बीरमाण ईश के रस का पडा वा कवि बन्ध बपक वा लेकिन है मुरजमन । नरवाणी को मूर बन्धनीया देखवाणी तुने ही बनाया ।

धनेक किम्बदन्तियों के नायक सूर्यमस्त के जीवन में भारी असंपत्तियाँ मिलती हैं, लेकिन उनके पांडित्य और उनकी सुजन-सामर्थ्य के सम्बन्ध में कही जो मत नहीं । सूर्यमस्त ने स्वयं की निम्न विषयों का ज्ञाता माना है—

१ ध्वज २ धर्मकार ३ धनुमसास्त्र ४ नीतिवाता प्रमुख धर्मसास्त्र ५ धर्मसास्त्र ६ कामसास्त्र ७ मणित प्रमुख ज्योतिषशास्त्र ८ धर्मसास्त्र ९ धर्मिजान कोप १ नायक नायिका लक्षण ११ साहित्यशास्त्र १२ संगीत शास्त्र १३ काम निर्णय १४ पुराण १५ बीषेपिक १६ पाठजम १७ उत्तर मीमांसा १८ ह्यमलक्षण १९ धित्यशास्त्र २० नपाविपदु परीसा २१ रत्न परीसा ।

डा० रामबिलास शर्मा ने लिखा है कि भाष से १० वर्ष पूर्व की राजनीतिक चेतना सर्वत्र एक ही नहीं रही । और १० वर्ष पहले प्रकेता हिन्दुत्वान ही एक ऐसा देश वा जहाँ धनेक जातियों ने मिश्रकर स्वाधीनता के लिये संघर्ष किया । स्वाधीनता का सच्चा धर्म धर्मोन्नी हुकूमत के पहले समझ में नहीं आया । सूर्यमस्त के काव्य में उसी चेतना का उत्प्रेषण है जिसके स्वर उत्कासीन कवियों से लेकर भाष तक की बाणी में सुन रहे हैं ।

सन् १८२७ से लेकर भाष तक की पूरी एक शताब्दी में जितने भी कवि हुए, उन्हें प्रमुख रूप से दो चाराधर्मों में विभाजित किया जा सकता है—

- १ प्राचीन सैमी के कवि ।
- २ धार्मिक सैमी के कवि ।

सम्पूर्ण काव्य की धून प्रेरणा और भाष बाप सचमम समान है लेकिन उनमें सैमी की दृष्टि से अंतर मिलता है । प्राचीन सैमी के कवियों ने परम्परा से प्राप्त रूप और धर्म धर्मधार तथा भूमिभक्ति के माध्यम से ही अपनी भावनाओं को प्रकट किया है जब कि नई सैमी के कवियों ने हर दृष्टि से नवीनता अपनाई है ।

अतः इन दोनों चाराधर्मों की मूल्य मूल्य नहीं करता उचित होगा ।

१ सन् १९२७ की राज्य-व्यति—डा० रामबिलास शर्मा ।

## कन्नड

### १ प्राचीन शैली—

बख्तावरजी—जन्म सं० १८७० मृत्यु सं० १९५१ । यह बख्तवापा और राजस्वानी दोनों के मध्ये कवि थे । 'केहर प्रकाश' इनका सर्वश्रेष्ठ काव्यग्रन्थ है जिसमें कमल प्रसन्न बैर्या और प्रेमी केसरीसिंह की प्रणय-गाथा है । ग्रन्थ रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—

- |                        |                      |                        |
|------------------------|----------------------|------------------------|
| १ रसोत्पत्ति           | २ स्वप्न-यश-प्रकाश   | ३ सन्धु-यश-प्रकाश      |
| ४ सज्जन-यश-प्रकाश      | ५ कलह-यश-प्रकाश      | ६ सज्जन-विजय-चन्द्रिका |
| ७ संचारुण्य            | ८ ग्रन्थोक्ति प्रकाश | ९ सामर्थ-यश-प्रकाश     |
| १० राजनिर्वो की पुस्तक |                      |                        |

चारण्य रायसिंह—इस्वर भक्त चारण्य रामसिंह मारवाड़ के मोडवाल क्षेत्र के मिरजेसर ग्राम के निवासी थे । इनका जन्म सं० १८७१ और स्वर्णारोहण सं० १९३७ में हुआ । यह भक्त कवि थे । साथ ही स्वयं बड़े बहादुर भी थे । एक बार जब वे रूपनगर गये तो रूपनगर के ठाकुर गवसिंह के बरोगा मोठी ने उनकी बड़ी खातिर की । रायसिंह जी ने प्रसन्न होकर 'मोठिया रा बूहा' नाम से ३६० श्लोकों वाले जिनके कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

- १ 'मज्ज बेटा सल भ्रात हेम तखी संका हुती ।  
मुठिया गयो न साथ मरता राबस्य मोठिया ॥'
- २ बीसमदे बे सूर, खाटी पण खापी नहीं ।  
कीबीं बाठ कसूर माया उणु जें पोठिया ॥
- ३ 'भावो गयो निघार तागां रयो न तेणु री ।  
सगो बीसल तार, माया सांछो मोठिया ॥

कबिराजा गुरुरीदान—जोधपुर नरेश के धर्मित कवि गुरुरीदान का जन्म सं० १८८६ में हुआ और मृत्यु सं० १९७० में हुई । विमल भावा के बोकीवाल इनके पितामह थे । इन्होंने 'असंबत असोभूपण' नामाया जो धर्मकार ग्रन्थों में सबसे बड़ा है । इसी ग्रन्थ पर इन्होंने कबिराजा की उपाधि मिली ।

शिबबहादा पास्हाबत—जयपुर राज्यांतर्गत हल्लोठिया ग्राम के पास्हाबत बाण्डों के घर धारिचन शुक्ला ८ वि० सं० १८९६ में जन्मे थीं शिवबहादा पास्हाबत ने जब काव्य रचना शुरू की उस समय देश पुरानी कड़ियों और अन्य मास्यताओं को ठुकराकर वैराग्यित्य धर्तीतपूजा और धर्याभिमान की ओर बढ़ रहा था । थी पास्हाबत काही समय तक ठाकानीन प्रसन्न नरेश

ठाकुर हनुमत्सिंहजी के प्राधित रहे और राजा के स्युट होने पर उनका हीप जीवन बृम्बावन में बीठा। राजस्वान रिचय सोसाइटी, कलकत्ता से प्रकाशित राजस्वान में उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है। वे ऐतिहासिक के अतिम चारण कवि थे। उनकी कविता में साहित्यिक परम्परा की कट्टरता नहीं पर उसके प्रति वे उदासीन भी नहीं। उनके काव्य का उदाहरण प्रस्तुत है—

‘इसा बचन मुखि ऊठियो भय मोके भसमाक ।  
 बाब कहे सुण बाबली-तबली खेत तमाक ॥  
 तबली खेत तमाक कहाळ केहरी ।  
 सही गरब नहि सीस क माये मैहरी ॥  
 मरण तली भय मानि भोगि तबि मानवी ।  
 बाब बनम बैकाब भाब कुस मानवी ॥’

पासावत जी ने अंवार के समय पद्यों की भी बड़ी सुन्दर रचनाएँ की हैं।

**ऊमरबान**—उत्फासीय सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य बाणों की मार्मिक खोठ करने वाले स्वभाव से बिलोबी प्रेम के पुठसे और निर्मयता के स्वल्प ऐस-नरेस व प्रजा के सच्चे हितेपी बिचा और ज्ञान की सामसा में मल सरस और सरस कवि ऊमरबान का बन्म परकना फलीवी (मारबाड) में बीसाख सु० २ वि० सं० १९०८ में और स्वर्पाटोइस फास्तुन सु० १९ वि० सं० १९९० में हुआ। बोलचाल की राजस्थानी भाषा में बिच पर जोधपुर की स्वाभीय बोली का प्रभाव है आपने बीर हास्य और व्यंग्य प्रभाव काव्य रचना की। मारतेनु काल में सामाजिक कुरीतियों पर सेखनी बसाने वाले लेखकों और कवियों के ही समान ऊमरबान ने भी रचबाडों की उत्कार एवं परिस्वति-बन्म कुरीतियों पर तीखी मार की। आपकी भाषा बीली और सामग्री पर रामसनेही संप्रभाव का भी प्रभाव पडा है। महर्षि बसानम्ब से साक्षात्कार का प्रभाव भी आपके काव्य में मिलता है।

सं० १९२७ में प्रसिद्ध इतिहासख रामबहादुर गीरीसंकर हीराचंद मोम्ब को उचयपुर के सरस्वती भवन में आपने अपना परिचय Daily delightful Umardan कह कर दिया। मोम्बजी के अनुसार वे बन्मसिद्ध बाबु कवि थे और उनके काव्य का राजपुताने में बड़ा आबर ना। भी अपबीससिंह यहलौत ने ‘ऊमर काव्य’ नाम से इनकी कविताओं का संपावन और प्रकाशन किया है।

श्री ऊमरवान के काव्य में समाज सुधार का विवेचन ही नहीं, रसों की मधुर धारा भी है। सरस और सरस काव्य में द्विपल काव्य का याधुर्य भी है।

श्री ऊमरवान की स्रजना रो छंद 'कलवार करामात' श्रवार को हाम 'बफोन हूडी' 'विमिचार की सुराई' शरू रा दोस' भर्म कसौटी' शीलामो' 'धमल रा शोगल', तमाकू की ताडना' श्रवियों का सांथा गुल' ठोरा टी ताटीक' और 'राठीड दुर्गाबास की श्रीरंगजेव ने शर्जी प्रावि प्रायिक सोक प्रिम कविताएँ हैं। श्री ऊमरवान ने राजपूतों के पठन पर ही नहीं किरंगियों के कंदन और कुम्भों पर भी चोट की। स्रप्य सिक्करणी मधुमार बृत्त मिद्धम माराप शोटक बोहा, मोठीबाम ससनी गपर निसाली, सिलोका कुडबी कवित्त प्रावि विविध श्रव्यों में प्रापने सरस और प्रेरणास्पद काव्य रचना की। उदाहरण प्रस्तुत है—

‘महकलवार पुस्य श्रवितासी पुन काटठ यह बम की फंसी।

कू, बाइव किर मधुरा कासी या ही के बस बही ज्पासी।

(कलवार करामात)

प्राबाब श्रर्म उम्मेदवार, परवरिधि करहु परवरदिमार।

बंदगी करये महरवान जित्पवी बक्स किवले अहाम ॥

बिसकुल बिद्यानि बैबिक विधान कबहु पड़ि है नहि हम कुराल।

कटि सिजा सूत्र-मुपव कराम बाबें न मरीने प्रात बाय ॥

(श्रीरंगजेव ने शर्जी)

‘मोटी माफ्री मांय धमलदारी धू श्रव्यां।

देष सुधारण बसा-मास विम धायू सड्यां ॥

द्विगलाजदान—शेवापुरा (बयपुर) में बग्ने न्व० पी द्विपलाजदान कविता की श्रवणोचन काम के श्रवणिक श्रमर्ष कवियों में मरुना है। कुछ प्रशंसक इन्हें द्वितीय सुममल का सम्मान देते हैं। प्रापने हजारों कुटकर कवित्त छंद गीत श्रप्य, दोहे और छोरटे लिखे हैं। उनके कुछ प्रम्य निम्नलिखित हैं—

१ मृगया मुनेत्र २ मेहार्द महिमा ३ बाणिया रासो ४ प्रथम-पयोधर

सूममा मुनेत्र में तत्कालीन ठाकुर शेरसिंह (कुषामण) द्वारा किये गये शेर के चिह्नार का रोचक और सजीव चित्रण है। मेहार्द-महिमा देवी श्रवित का नीराजन है। बाणिया रासो ध्यम है। एक उदाहरण श्रविये—



भाहर गुर निचट वेड बांका मड बामा ।  
 घग घावा उचई सई बिहुं घम्बर लाग्ग ॥  
 घग घासम आ गैस—बाघ कँहर बटघस्यो ।  
 गग्गो सहित महर—सँड भरपूर उम्भवी ॥  
 सखि सारदुम् हापम् सवम् जोम कवल् माबै पडी ।  
 क्ककाय पैल हुंठा किना—वम्भय पर तडिता पडी ॥'

बस्वैबबाल कबिया—श्री द्विगलात्रयान के ही पुत्र के जो चारण बाति के प्रथम स्तोत्रक के । आपने 'बस्वैब विनोद' की रचना की ।

बालाबन्धा —बयपुर राज्यात्मत हणुंठिया ग्राम के चारण के । कासी नापरी प्रचारिली ममा की ७०० ) का राज बेकर इन्होंने 'बामाबन्धा-राजपूत-चारण-पुस्तक-मासा फण्ड स्थापित किया जिससे राजपूत चारणा के ग्रन्थो का प्रकाशन होता है । इनका जन्म सं १९१२ में और मृत्यु सं० १९८८ में हुई । विमल व विमल—दोनों भापाधों में आपने १० ग्रन् रचे । आपकी रचनाएँ सरस और भावपूर्ण हैं । भापा पर पूर्व अधिकार है और वह उचित-बिचित्र से श्रुतिरिक्त हैं । उदाहरण प्रस्तुत है—

घाघपो बोस्यो कुकडा बिरह उबर की बार ।  
 बेत अचटी मानव्यां कोय सुमर करतार ॥  
 कोय सुमर करतार—बिहूणी रतडी ।  
 पल पल बीठी बाय बजन्वी ज्यु पडी ॥  
 कासि बर्न के घाज पयाछी टूकडो ।  
 'कहरि' हरि भीठारि, कहे इम कुकडो ॥

रामदयाल कबिया —श्री गन्धवान कबिया के पुत्र और 'रायसलजस सरोज' के यद्यन्त्री कवि श्री रामदयाल कबिया का जन्म वि सं० १९२४ में सोकर के उपग्राम फतहसिंह की छाणी में हुआ । उत्कालीन ठाकुर कुशलसिंहजी पालडी ने छीकर का इतिहास तैयार करने के लिए बन्धी छुआनालजी और रामदयाल कबिया को आमन्त्रित किया । बन्धीजी ने 'भावब बंस प्रकाश' और रामदयाल कबिया ने 'राजसल-जस-सरोज' की रचना की ।

'राजसल-जस-सरोज' करलीबाल कबिया के 'सूरज प्रकाश और सूर्यमल के 'बघमास्कर' की सीसी एच परम्परा का काव्य ग्रन्थ है' । १ पर्वों का यह ग्रन्थ वि सं १९७ से शुरू होकर १ व वर्ष कुष महीनों में पूरा हुआ ।

{ रामदयाल कबिया और रायसल-जस-सरोज (बेक)—श्री श्रीमान्दसिंह शेरवावत

ग्रन्थ ब्रजभाषा में है लेकिन लौकिक शब्दों का भी काफी प्रयोग मिलता है।  
ग्रन्थ का ठाना-बाना परम्परागत चारण शैली का ही है। आपके रचित  
ग्रन्थ ग्रन्थ—

१ नारद चार्त्त शतक २ सुबह-शतक ३ देवी-स्तुति-शतक  
४ ब्रह्मज्ञान-सोपान ५ उपदेश-अर्धबिंसी ६ कल्याणसहस्रनाममाला  
७ निशानी गुणमाला ८ भावब मरसिया और ९ फूटकर। उनके काव्य  
का एक कुछ प्रसंग दृष्टव्य है—

‘कुछ पीठि करकठ बन्धि बरकठ संकि सरकठ बोन्ध बन्यो ।  
प्रतसावि प्रकट्ट बन्धिद बट्ट मट्ट कम्पुकि काम मयो ॥  
मरबद्ध बराह बरकठ जे प्रतसाविक सन्ध रहे जलटे ।  
बैठ मारन जाठ संभार जहाँ फकि बन्नुमि धादि प्रचान फटे ।

कविद्या गिरिवरदान—जोधपुर राज्य की जेतारण तहसील में बालुची  
ग्राम के निवासी थे। काव्य में धर्मकार सौम्यम और उक्तिशैली का सफल  
प्रयोग मिलता है। कविद्या गिरिवरदान का एक गदर सम्बन्धी छप्पय देखिये—

‘बरती बजवह बरस पड़े इत बेस भपारा ।  
बिन्दु मोक बसलियो साध लायो उर साया ॥  
कानी कानी कन्हू बाय कम्पनि उर बीयो ।  
सोज सबागो सास सूट ऐरखपुर बीयो ॥  
बजरग म्हाट सागा बहू भके बिनी विस धाउवे ।  
महाराज बीज मेवा महत भरकर रूपिया धाउवे ॥

नाम्पुदानजी बारहठ—जोधपुर जिले की धोरमड़ तहसील के बाहू गाँव  
के निवासी हैं। इनका जन्म स० १९३१ में हुआ। यह डिगल के प्रमुख कवि  
और कविता प्रेमी हैं। इन्हें लगभग ६९ ग्रन्थ कंठस्थ हैं।

महाराज अतुरसिंह—महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के पुत्र बाबसिंह के  
बंदाब स्व० महाराज अतुरसिंह का जन्म स० स० १९३३ में हुआ। आपका  
धर्मिक जीवन निरन्तर में बीठा और वे कुटिया में रहे। आपने राजस्थानी  
और ब्रजभाषा-शैली में कविता की। इनके काव्य में सबाई और स्वामयिकत्व  
है। भावमयी और मौलिक होकर भी उनकी कविता उपदेशों से परिपूर्ण है।  
काव्य में ‘सर्व-विष-मुन्दरम्’ की कमीटी पर भी अतुरसिंह श्रेष्ठ कवि हैं।  
प्रेम दिवानी शैली के बाद मेवाड़ में सर्वाधिक लोकप्रिय कवि के रूप में  
महाराज अतुरसिंह की ही मान किया जाता है।

रचनाएँ—१ भगवद् गीता की संवाचनी टीका २ परमार्थ विचार ३ योगसूत्र की टीका ४ मांस्य तत्व समाज की टीका ५ सांख्यका टीका ६ मानव भित्त रा चरित्र ७ शेष चरित्र ८ प्रमत्त पचीसी ९- तु ही घण्टक १ अनुभव प्रकाश ११ चतुर-चित्तमणि १२ महिम्न-स्तोत्र १३ चन्द्रदेवराष्टक १४ हनुमान-संघक १५ समाज-वत्तीसी १६ चतुर प्रकाश ।

भाषकी रचना का उदाहरण दक्षिणे—

भाषी बी भुगताय हुआ हुआ बीजे समी ।  
 सोलां सु खिसनाय मय बीजे मावेसरी ॥  
 कारक तो कहतो फरे हर कीने हरनाक ।  
 जाये हूँ हीने कहे हिये सिकाफो राज ॥

तेज कवि—पद्यरचना प्रेमी तेज कवि का जन्म जैसमेर में स १९३८ में हुआ और फागुन शु २ सं १९९९ को स्वर्गवासी हुए । 'स्वराज-वाचनी' भाषकी प्रत्यक्ष प्रसिद्ध रचना है । तेज कवि ने कसकटा के स्वराज्य आंदोलन में भी भाग लिया था । उनकी वाचनी पर महात्मा गांधी की विचार-वाच का प्रभाव भी प्रकट होता है । भाषने कई 'स्याम' और माटक भी रचे ।

केसरीसिंहजी वारहठ (कोटा).—कोटा के स्वर्गीय केसरीसिंहजी वारहठ को एक अतिरिक्त साहित्यकार के रूप में स्मरण किया जाता है । वैभू विजोत्तिया के आन्दोलन में और अन्य अतिरिक्त गतिविधियों में इनका घाटी योगदान रहा । राज भोपासिंह सरवा और ठाकुर मोरिसिंह सरवा प्रादि अतिरिक्तियों के सहयोगी वारहठ केसरीसिंह एक बानस्क और घण्टक कवि थे । सर्वे कर्षण के इतिहास प्रसिद्ध दिल्ली-दरबार के घण्टक पर भाषने उदमपुर के तत्कालीन महाराजा फतहसिंह जी को विगत के कुछ सौरठे (बैठाबली या बुन्द्या) लिखकर मैत्रे और उन्हें अपने खत्रियाचित पीरप और स्वाभिमान की याद दिसाई—

धनसब सावंधास राणा पीठ कुम राजसी ।  
 रजो स्थाय सुखरास एकनिग प्रभु भापरे ॥  
 मान मोर सीसोर राजनीति बत् राजणी ।

(ई) पधरमिष्ट पी गोब कन् मीठा बीठा पठा ॥'

वारहठजी की इस चुनौती से महाराजा की प्राँचें तो चुनौती ही मात्र ही राजपूताने के राजबाड़ों में बैठना की एक लहर सी बीड गई और उनका तो पूरा परिवार ही अतिरिक्त बच गया । 'सार्ध हात्रिज बम केस' में इनके सुपुत्र

भी प्रतापसिंह को धरौदा ने छाँसी पर मटका दिया । उनका एक प्रसिद्ध बाहा  
 कुटम्ब है—

‘सतबाह बोजी नरा सिमित भरुमो सहपाण ।

इहा भी मरुवर ठरम् वल्, पातासीह परमाण ॥

‘सुमेधु बापुक स्वर्ण’ नाम से भापने लत्कासीन राजाओं को लक्ष्य करके  
 भी लिखा । तब और सब’ सेहमासा में भापने वेम के प्राचीन गौरव की  
 लत्कासीन बियम स्थिति से तुलना प्रस्तुत की ।

मानवान कबिया—बीपपुर (सीकर) के निवासी थे । इनके रचित  
 तीन ग्रन्थों की जानकारी मिली है । १ मंगलबंस-यस प्रकाश (८००० खं) २  
 विद्व-विद्वली ३ पुटकर ।

‘मंगलबंस-यस-प्रकाश’ बंधमस्कर परम्परा का ग्रन्थ है । इसकी मृत्यु २५  
 वर्ष की आयु में सं० १६५६ में हुई । मानवान रचित एक दोहा देखिये—

‘बाठा मन्दिर छिर बियो घाता वल् भवरय ।

इण बाठा सुबो घमर रावसमोठा रन ॥

छद्मराज उज्ज्वल—मारवाड के ऊबसा घाम में वि० सं० १६४२ में  
 जन्मे श्री उज्ज्वल उज्ज्वल को चारण्य जाति के रत्न की स्थापति प्राप्त है ।  
 आयु सतासी की तीन चौथाई सीढ़ियाँ पार कर जाने पर भी श्री उज्ज्वल  
 उज्ज्वली-साधना में निरंतर समग्न हैं । इन्होंने अपने जीवन में छोटे-बड़े २७७  
 ग्रन्थों की रचना की है जिनमें अधिकांश राजस्थानी के एक दो धरौदा के  
 और कई हिन्दी के हैं । इत कर्तव्यनिष्ठ साहित्यकार के पास हस्तलिखित  
 ग्रन्थों और लिखरी हुई ग्रन्थ साहित्यिक सामग्री का विस्तार मबार है ।

श्री उज्ज्वल ने राजस्थानी की बड़ी सेवा की है । उनके पिता भी अच्छे  
 कवि थे । राजस्थानी भाषा, साहित्य और व्याकरण को संपन्न और समर्थ  
 बनाने में श्री उज्ज्वल की सेवाएँ अविस्मरणीय हैं । सत्साहित्य का निर्माण  
 उनके जीवन की सबसे बड़ी भावना है ।

राजस्थानी शब्दा के सही उच्चारणों की प्रथि में डा० टैसिटोरी और  
 डा० डम्पू० एस एसेन भी श्री उज्ज्वल के श्रेणी हैं ।

श्री उज्ज्वल की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

१ सूडार (द्विगत) २ मारवाड उ बीर ३ हूबप्रकाश ४ मायुभापा-  
 बोहावली ५ भागिण उ दूहा ६ स्वराज-सतक ७ उज्ज्वल-सतक ८ तेज-सतक  
 ९ सचोवय-सतक १० अम-सतक ११ सती-सतक १२ बानीरबात १३ अचगुण

पर हुआ १३ भावा-खतक व कई धर्म ।

‘राजस्वाम-साहित्य-प्रकाशनी उज्ज्वल प्रकाशनी’ के नाम से श्री उज्ज्वल के प्रकाशित साहित्य को प्रकाशित कर रही है ।

परम्परा के कवि होकर भी श्री उज्ज्वल ने कविता में नया रङ्ग भर घोर उसे सुप स्वर से पुनरित किया—

“भारत देश मुजब नहरु की पुत्री नई ।  
सेवनाथ सरजङ्ग भारी बाप्यो मानिया ॥  
नहरु पकड़ निरान सई स भारत ऊपर ।  
परतत पाम पनेन भापै बिसविष मानिया ॥”

नाबूदान महियारिया —

उज्जपुर के कारण कवि श्री नाबूदान महियारिया का जन्म वि सं० १२४८ (भाद्र) में हुआ । सती और सुर पर रचना करने में आप सिद्धहस्त हैं । महियारियाजी का काव्य कारण-काव्य-परम्परा की विरासत से भोत प्रोत है तथापि उसमें नवीन भावों और युगीन वातावरण की झलकियाँ भी मिलती हैं । स्त्री सिला की दृष्टि से मात्र तीसरी कक्षा पास यह कवि घरन-सरस सुभङ्ग और सुन्दर भाषा में काव्य रचना करता है । अनुभूति मार्मिक और अभिव्यक्ति तीव्र है । सतियों का तो यह बुझामखि कवि है ।

सूर्यमल्ल और विमोगी हरि की ‘सतसई’ परम्परा में महियारियाजी की बीर-सतसई का भी विशिष्ट स्थान है । बीसवीं सती में महियारियाजी मध्य कालीन बीरों और बीरकथाओं की ओर आकर्षित हुए, तथापि उसमें युगधर्म के अनुसार शाश्वत-धर्म की गई व्याख्या भी मिलती है । महापद्मकुमार का रघुबीरसंहारी (सीतामऊ) के मतानुसार ‘साहित्यिक दृष्टि से भी यह बीर सतसई राजस्वामी भाषा का एक भाषना पूर्ण अनोखा काव्य है जो चिरकाल तक उसके साहित्य की समृद्ध करता रहेगा । ‘बीर-सतसई’ के पारिवर्तित महियारियाजी के निम्न ग्रन्थों की जानकारी भी प्राप्त हुई है—१ बाबी-सतक २ हाड़ी-सतक ३ भासत-सतक ४ मोहन-सतक ।

‘बीर सतसई’ काव्य के उदाहरण दिये—

‘ओ करवी बिउसी हुसी भासी बिख नूरीह ।  
ऐ नई किन्दरु बाप से बनती रङ्गपूतीह ॥  
‘ओ पन पटके पीकियो समर विभावे ठाठ ।  
पूत-ठया पपपानठी धंनसी ओम्ब माठ ॥’

मिलसी जस भरिया पसे, भरस प्रमोदक बीब ।

तरबर जस ही ऊपसी माटी मिलसी बीब ॥'

**कबिराज मोहनसिंहः**—साहित्य-संस्थान राजस्थान विद्यापीठ से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो के यद्यस्वी सम्पादन कबिराज मोहनसिंह का जन्म वि० सं० १९५६ में मवाड़ के बसी ग्राम में हुआ । कबिराजकी विमल और पिंगल दोनों के कवि हैं । आपने बिहारी रसज्ञान और सूरदास के कई छन्दों का भी विमल में पद्यानुवाद किया है । आपकी अभिव्यक्ति सरल और प्रभावोत्पादक है । छन्दों का आपको बड़ा अच्छा ज्ञान है और उन पर प्रभाव है । मोहनसिंहकी ने काव्य में परम्परागत आसङ्कारिकता का भी विशेष समावेद है । आपके रचित ग्रंथ इस प्रकार हैं—

१ प्रताप-यश-बन्धोदय २ भूपाल भूपण ३ कुम्भा-कीर्ति प्रकाश ४ कुमें यश-कमानिधि ५ भ्यंग्यार्थ प्रकाश ६ कुडसिया-सतक ७ नीति-सतक ८ मोहन-सतसई ९ भृगुया-भावनी १० महायथा चरितामृत ११ राज-बहार १२ रघुबंध-चरित १३ मान-पचीसी १४ बणिक-वहसरी १५ प्रपञ्च-पचीसी १६ बीमल पचीसी १७ रामदास-पचीसी ।

**राजस नरेन्द्रसिंहः**—सूर्यमत्स्य की सतसई परम्परा में बियोगी हरि और मापुवान महियारिया की बीर सतसई तथा बोबनेर ठाकुर राजस नरेन्द्रसिंह की 'बीरपूजा-सतसई' का विशेष सम्मान है । आप विंगल के कवि हैं और परम्परा से प्रभावित हैं । आपके काव्य में आसङ्कारिकता के साथ साथ चुस्ती भी है । विमल भाषा की सामर्थ्य राजसजी के काव्य में बड़ी सूबी से उठती है । 'बीर पूजा-सतसई' के मङ्गलाचरण के दो उदाहरण प्रस्तुत हैं—

'भरणो मङ्गलाचार, मन्धर बरणी भ्रमर पर ।

भरणो सिर दुदार—सरणी साबठ स्याम रो ॥

बांका गवां बनीत दाढा बीरुं गीठको ।

भ्रमरजड़ीक धनीत धीबण बैमित वातक्या ॥

**मुकुन्दबान खडियाः**—बैवाङ् (मारवाड़) के निवासी हैं । आपका बेहाव कवीक ८ वर्ष पहले हुआ है । आपने भी 'बीर-सतसई' की रचना की जो अपूर्ण है । उदाहरण—

"कर टांका पट्टी करी सिक्ताकी सितसांह ।

मोषा बाबा ऊबठ, टामक टहट्टाह ॥

बीमा टांका बुर पर, बाबर मकियन बख्त ।

धुण सेसी सिन्धु-सबद ठठ बियाड़े धन्व ॥

सुमानसिंहः—यह सीठामठ (महामा) निवासी थे । इनका लिखा 'कालिमा सतक' नीठि-काम्य का प्रेष्ठ उदाहरण है । राबिया के सोरठों के ही समान इस सतक के सोरठों का आवरण है । अतः में राजनीति की प्रमानता है—यथा इससे कवि की वैवाच्य और इतिहास की जानकारी का भी परिचय मिलता है—

'राबण राकठराज विणुस्यो विणु मारन बहूपा ।

उण मारण मूष धाव केठाइ धामे कालिमा ॥

हुई बीबरी हाण मर रहम्या मानुक मय ।

बीरा य बासाण किण विच भावे कालिमा ॥

शम्भुसाम आक्षिमा—मोंपटिया (मेवाड़) के निवासी थे । आपने अश्रिम उम्माकू धारि के दुर्भ्रमना और सामाजिक कुटीरियों पर लिखा है । इनकी मृत्यु पीप वि सं १२२६ में हुई । काम्य का उदाहरण प्रस्तुत है—

"हुई भवन बन हाण म्यामी कई लामे मयू ।

धन्ठठणी धापाण पटकामे भव रे बटे ॥

करव कनाली रो कडे ठिख सू हुई उवाठ ।

धोपी का बाक जनी बाह । हुवारण बाह ॥

धसकरण चारण —बीठपुरा (मेवाड़) के निवासी थे । इनकी रचनाओं में क्षात्र-धर्म की श्रेष्ठता मिलती है, यथा—

"विद्यवरम हितरेह, देठा मठ बोप हुबो ।

धासिर पत्त जत्त प्ह, मिट्टी में मिल बावली ॥

किरीरसिंहजी सोड़ाः—प्रसिद्ध कवि भी कृष्णसिंहजी सोड़ा के धारमज भी किरीरसिंहजी पटियाला रियासत में इतिहासज्ञ के पर पर रह चुके हैं । 'करली चरित' और 'हरि-रस' इनके सम्पादित ग्रन्थ हैं । पापल कवि के नाम से इन्होंने 'भागल-ममोद' की रचना की है । उनके काम्य का उदाहरण प्रस्तुत है—

"बाबां धे बाली बह्याणी बिलसठी ।

बाबर सा भाबर बूठ पन्ती उबरंठी ॥

कामर उर बनणी य कीमा जतकारी ।

धीवप हरिया भा पर बाऊँ बसिहारी ॥

बलिहारी भारत हित-चिन्तक चारण्य रे ।

जबुमुमी भमठा रा सीबै चारण्य रे ॥

विजयदान — श्री विजयदान मारवाड़ के सरबड़ी ग्राम के निवासी वे धीर  
रथे थे । लोक संस्कृति में रमे हुए इस कवि को रीकड़ों चार्ताएँ व कहानियाँ  
पाए थीं । दोनों में इनकी विशेष गति थी ।

मुकम्बदान चारहठ — ये सेचवाटी के बड़े प्रभावशाली कवि थे । श्री  
मुकम्बदान चारहठ विरचित काव्य के सम्बन्ध में निम्न श्रुतियों की जानकारी  
प्राप्त हुई है—

१ विरोड का युद्ध (काव्य काव्य) २ रज्जु बचीसी ३ शय्य फुटकर ।

गोपालसिंह सरवा — केसरीसिंहजी चारहठ के समकालीन क्रांतिकारी  
कवि थे । इन्हें अंग्रेजों ने गिरफ्तार किया और उनकी जागीर जप्त कर ली ।

कान्हीदान चारहठ — स्वर्गीय लक्ष्मण कवि मनुष्य देवायत के पिता  
श्व० श्री कान्हीदान चारहठ की मृत्यु मयमग १० वर्ष पहले हुई । यह द्विपक्ष  
के भीतकार थे । आपने कुराईयों और कुटीरियों पर व्यस्य किया तथा प्रायशः  
श्री स्वायत्ता के सिधे काव्य रचना का वाचित्व निभाया ।

बलदेवदान कविया — विजयदान के पुत्र श्री बलदेवदान कविया की  
शांत और हास्यरस की श्रेष्ठ कविताएँ मिलती हैं । सासरिये की सैम आपकी  
मति प्रसिद्ध कविता है ।

गोपीदान चारहठ ( श्लेषमच्छ ) :— फुटकर कविताएँ मिलते हैं । आपकी  
निम्न कविता प्रसिद्ध है— कलत्र माह कये रजपूत ।

ग्रामस छोड़ कगर कस मनको मरबाँ कर मजबूत ।

कान्तसिंह भाटी— अंग्रेजी शासन और व्यापार पर कई व्यस्य कविताएँ  
लिखी हैं । यथा— अंगरेजी रा तार-बले नामक अंगरेजी ।

अंगरेजी बलवार छपे लबरं अंगरेजी ॥

अंगरेजी व्यापार यबब बीजा अंगरेजी ।

अंगरेजी रोजोर घोर, सब कुछ अंगरेजी ॥

रामसिंह सोलंकी — विरोध की धीर और श्रुंमार रसों के कवि हैं ।  
उनका एक दोहा देखिए— 'बाप कट्ठो मायड बसी बर सूतो बाणीह ।

पुत अंगूठो चुल ने राके निमराणीह ॥'

भाडा खवानजी— जोधपुर राज्य के पांचेटिया ग्राम के निवासी थे ।  
यह महाराजा रामसिंहजी के समकालीन थे । सिबायब कुमसिंहजी जोधपुर



के मोघडा पांश के निवासी थे। इनके गीतों में गूढ द्विगम और दृष्य-कवित्त शोभा में ब्रज मिश्रित राजस्थानी मिलती है।

बारहठ मुगादत्तजी—सूर्यमस्मजी के मित्र और रत्नमम नरेण बसवन्तसिंहजी के पुत्रपात्र थे। आपने द्विगम की उच्च कोटि की रचना की है। साधू राधोदासजी वाली तहगीत के मिरगासर पांश के निवासी और निर्माक कवि थे।

सुखजी भामिया—बाकीदासजी के सबसे छोटे भाई थे। यह बड़े स्पष्टबक्ता और स्वतंत्र विचारवाण के स्वर्णित थे। आपकी कविता प्रीक है।

सिंखमीदाम ऊजस—उज्जवराजजी उज्जवस के पिता थे। आप हास्य रस की सुन्दर रचनाएँ करत थे।

महाराज मानसिंहजी—कलम और तसवार बोलों की गौरवान्वित किया। काव्य के प्रतिरिक्त बह दृष्य कलाओं के भी प्रमी थे। आपने राजस्थानी व सिंगल में कई ग्रन्थों की रचना की। आपके भजन विशेष मोकप्रिय हैं।

इन्हीं के साथ कई भी तिलोकदास गबादान साधू, भारतदास योपासदान प्राडा बाधूपाम साधू राधोदासजी सिंहायक बुधसिंहजी हनुवन्तसिंह देवडा कु० रघुनाथसिंह राठीक मोदीसिंह राठीक सांखदान घाघिबा धनोपदान बीठू नवलजी लालत नानूसिंह बेवडा रामनार्थसिंह कविबा कुगलसिंह लीबी छानमाम मोहटा कु धायुवानसिंह चण्डीदान लीनाम्पसिंह रोखावत नूरसिंह खेलावत और रामोदरप्रसाद घाघि कई कवियों की रचनाओं से राजस्थानी कविता की परम्परा और परिपाटी को काफ़ी दूर तक समझा जा सकता है। काव्य-परिपाटी और परम्परा के प्रति प्रत्यक्ष प्रासक्त इन अधिकांश कवियों के लीनी और भाव के बोलों ही पर प्रतीत से बने रहे। यह नहीं कहा जा सकता कि उसमें नवीनता है ही नहीं लेकिन यह वास्तुतः सत्य है कि उस पर पुरानी काव्य-परिपाटी की विरासत का ही मुलमा प्रतिक चढ़ाया गया। यही कारण है कि प्राचीन लीनी के प्राधुनिक कवियों में नई कल्पना नये पुन-वर्णन और विर नवीन सुष्टि-दीर्घर्म के प्रति उस मौलिक अनुसूति का प्रभाव रहा जो प्राधुनिक काल की नई धारा के कवियों में मिलती है।

## (२) नई धारा

वीर सतसई' महाकवि सूर्यमस्त मिथस की कर्तव्य-विरासत का उदाहरण है जो राजस्थान की बनता को तथा हृदयभ राजाओं को सही मार्ग दिखाने का प्रयत्न है। प्रारम्भ के कई बाहों में इस और स्पष्ट प्रकृत मिलता

है। महाकवि की इस चेतनाकी का तत्कालीन और पश्चात् के कवियों पर भारी प्रभाव पड़ा। कहा जा सकता है कि समस्त कवियों की सम्पूर्ण पीढ़ी ही अंग्रेजी साम्राज्यवाद और पतनोन्मुख सामन्तवाद की विरोधी हो गई। परम्परा की धारा (प्राचीन सीधी) और नई धारा दोनों क्षेत्रों में इस बिद्रोह के स्वर स्पष्ट सुनाई देते हैं। बाकीबास गिरिधरदास तिलोक्तवान किसनदान राधो-वास केसरीसिंह बारहठ नापूराम दुपधी दसधी दुर्गादास, गोपालदास सिद्धमीषान और अन्य कई कवियों ने साम्राज्यवाद-विरोधी कविताएँ लिखीं और रचनाओं के विद्यालय जन-मानस ने उन्हें नई चेतना तथा नये शायित्य के रूप में अङ्गीकार किया।

भारत में तत्कालीन साम्राज्यवादी हरकतों और दमन को समझने की यही मूल कुञ्जी है— धायो इगरेब मुसक रे ऊमर, भाहस लीषा खोंबि उरा। सारे देश के बिस्म की चेतना को निम्नप्रायः कर देता ही जैसे उसकी एक मात्र आर्थिक विशेषता थी। उसकी संज्ञास्तन-बिम्बि के इस मूल मन्त्र को ठीक से समझे बिना उसके कार्य-व्यापारों को सही रूप में नहीं धाँका जा सकता।<sup>१</sup>

सन् १८५७ के पक्ष के उपरान्त अंग्रेजों को भारत में अपनी नीति बदलनी पड़ी जिसके मूल कारणों में महभारती के सरस्वती पुत्रों की भोजवस्त्री और बिद्रोही सत्कार का कम योगदान नहीं रहा। धीरता और साहस राजस्थानी-काव्य-परम्परा का सहस्रपुण्य है और समकालीन सभी कवियों ने अपना यह उत्तरदायित्व बड़ी सूधी से निभाया। कई कवियों की रचनाएँ तो इतनी लोकप्रिय हुई कि उन्हें लोक-गीतों का सम्मान प्राप्त हो गया।

राजस्थानी जन-मानस में राष्ट्रीयता की नई चेतना का सब फूलनेवाली कुछ कविताओं के उदाहरण प्रस्तुत हैं—

मू मठ बाणी रे गोरा—सड़े रे बेटो जाट को।  
 मो कँवर सड़े राजा बसरण को रे—गोरा हट जा—  
 राज भरतपुर को रे गोरा हट जा।  
 भरतपुर पड़ बाँको-किसो रे बाँको—गोरा हट जा।

(लोक-गीत)

१ 'इक डकी बिल एकरी मूसे कुल सामाव।  
 सूरि भासस एस में अकज गुमाई धाव ॥

१ परम्परा' (गोरा हट जा पद्य)—श्री विजयदान देवा लिखित ऐतिहासिक विवेचन।

टोटे घरकी भीतड़ा पाठे ऊपर बास ।

बारी जै मर मू-पडा—अधपतिपां धापास ॥ (गुप्तमल्ल)

- २ 'बजियो मसो भरखपुरवासो गावे नमर बजर मम गोम ।  
पहियां सिर साहब रो पकियो—भइ ऊमां नहू वीधी भोम ॥  
महि जातां बीजातां महिनां ए दुम मरए लया धबगणै ॥  
उसो रै किहिक रबपूठी मरह हिम्बी की मुसममान ।  
(बकिरामा बाँधीदास)

- ३ घाम लीगां गोरा बनी छोड़ियां न काई घायो ।  
प्रधी सारी घापीए छोड़ियां बहे पाँए ॥  
रोड़ियां नमारी डहू नहू माने टेक सो राजा ।  
जिकीं धतीड़ियां बहे हेकनो जोबाँए ॥  
(नामस नवमजी)

- ४ फिरम प्रसै बल फेमिया—तब दूहें राहो टेक ।  
पात बखी-बइ परम रो—ऊँचो रहियो एक ।  
(सांदू राजोदास)

- ५ खेसाबत बसहर समर, फिर बसबस फिर गाए ।  
प्रधी सज्ज कन्-कन् पडे भसहस ऊमां भाँए ॥  
(कविदा गिरिवरदास)

परम्परागत हिमाल परिपाटी की इन कविताओं में बिरोह की झलक मिलती है । इतना स्पष्ट है कि राजाभा के प्रसन्धि-बाधन को ही अपने काम्य की चरम साधना समझ बैठेवाले कवि जब युगीन बातावरण को पट्टातने लगे थे । उनके काम्य में इसीसिद्धे सुषित की रूपरटाहट है ।

## राष्ट्रीय धारा

बोझा और भागे बड़कर, जब अखिल भारतीय कांग्रेस और प्रजा-मन्त्राल के आन्दोलन ठेकी पर घाये और जब सम्पूर्ण राजपूताने में बिजोलिया आन्दोलन की आवाज पबकी तो राजस्थानी काम्य जन-मानस के सीधे सम्पर्क में आया । इस काम्य में राष्ट्रीय चेतना का उद्घाटन था । इस काम्य में नई स्फूर्ति थी ; लोगों ने देखा कि इस काम्य में राजस्थान के सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ की अभिव्यक्ति है और इस काम्य के नामक राजस्थान के ही बरती पुत्र और उनके परिवार हैं । यह काम्य राजवाड़ी राजधानियों के होट द्वारों की सीमा साँभ कर राजस्थान के जन-समुद्र से जा मिला । राष्ट्रीय चेतना की इस धारा ने राजस्थानी-काम्य-परम्परा का सम्पूर्ण स्वरूप ही परि-  
बर्धित कर दिया और उधमें जन-जन की वासी मुञ्जरित हो उठी ।

ऐतिकाल के राष्ट्रवाद्यम मे जो सुजन हुआ उसे नूतन जो धारणों मे विभाजित किया जा सकता है । एक धारा में तो यह काव्य बाता है जो नारी को नायिका क संकड़ों शैलों-उपभेदों में विभाजित कर ने सामन्ती विनास पर निर-मपीन रंग चढ़ाता रहा और दूसरी धारा वा यह काव्य जो प्राभय वाताघों के पुरखों की वीरता का बखान करके या उन्हीं प्राभयवाताघों क काव्यतिक शौर्य को कबित्व बेकर श्रेष्ठता का सम्मान प्राप्त करता रहा ।

संकड़ों वर्षों के बाद राष्ट्रीय चेतना का स्पर्श पाकर यह नई अभिव्यक्ति बच समाज में ऊँची तो पीड़ित और उपेक्षित जनता ने उसे अपनी आस्था से अनिश्चित किया । काव्य में नये उरसाह की माँग और नई प्रगति की महत्वाकीता अभिव्यक्त हुई । उस समय बिजयसिंह पथिक हरिभाई किंकर, नामु राम शर्मा गोकुल माई अट्ट जैसे वैदामवर्तों ने राजपूताने में नई चेतना जगाई । इस समय का काव्य-शोक काव्याभिव्यक्ति क अधिक समीप है और धागे बाकर इसी धारा का विकास प्रगतिशील काव्य के रूप में हुआ ।

बिजोलिया आम्बोसल के समकालीन बाठावरण का राजस्थानी काव्य अपने नये रूप का स्पष्ट परिचय देता है । राष्ट्रीय चेतना के इस काव्य को बनता ने एक राष्ट्रीय दायित्व के रूप में धक्कीकार किया । सर्वथी हीरासास शास्त्री माणिक्यलाल वर्मा हरिभाई किंकर, बपनारामखु म्यास और भैरवसास काला-बाबल' जैसे जनसेवकों ने शार्बजनिक जीवन में सक्रिय भाग लेकर भी अपनी सुजन-सामर्थ्य का बड़ा प्रच्छा परिचय दिया ।

मेवाड़ के श्री शीतलसिंह सोडा ने भी राष्ट्रीय धारा में कई गीत लिखे हैं । धाबुनिक काव्य-धारा के इस प्रथम उत्थान को राजनीतिक आभरण की सजा दी जा सकती है, क्याकि जन-मानस को आम्बोसित करने और उसे अपने दायित्व का मान कराने की दृष्टि से ही इस काव्य का अधिक महत्त्व है । यही राष्ट्रीय-धारा विकसित होकर बच प्रगतिशील धारा के रूप में प्रकट हुई तनी उसके साहित्यिक महत्त्व का धक्कीकार किया गया । राष्ट्रीय-धारा की कबिता के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं —

“दुनियाँ की मामूली बाता फनकड़ जाने सोप ।  
 छत धू झुली छपे छनाछन जर्म चीमटो रोप ॥  
 लाम लपेट बरा नहिं रावे जासे सुयो सट्ट ।  
 बाँधो फनकड़ बणबा धू ही बैसक होने टट्ट ॥

(हीरासास शास्त्री) ।

“उठ उठ भल्लुबो रो सीस कमाई बायी बारे बच जाये ।  
 तू कात रेंटियो कपड़ो करसे वंसो घर में बच जाये ॥  
 कर नाब गाब री—जात जात री एकठ केर सम्मल जा तू ।  
 मू बाट कुम्हार, बमार समी माई रो माई बणजा तू ॥

(माणिक्यलाल वर्मा) ।

“भेहनत करसी बो ही पासी मुच सम्मब भविकार ।  
 बैठल जाळे बामो स्तूरी समभ्यो नयो विचार ॥  
 म्हांण गाबो रो भाबार प्याण भाण रो भाबार ।  
 बेटी-मां भरलो सहकार ॥’

(गोकुलमाई मट्ट) ।

“कासा बापस रे,

अब तो बरताप वलती भाग

कासा बापस रे।” (नैरजलाल कालाबापस) ।

### प्रगतिशील धारा

पूर्व पंक्तियों में यह निर्देश किया जा चुका है कि राष्ट्रीय धारा में ही विकसित होकर प्रगतिशील धारा का स्वरूप मज़ीकार किया जो राष्ट्रीय धारा का सहज विकास है। इसी प्रगतिशील धारा को नई चेतना का दूसरा सन्तान कहा जा सकता है। जब राजस्थानी कविता मात्र प्रजापत्यक नहीं रही।

यही राजस्थानी कविता अपना साहित्यिक अस्तित्व भी बनाती है। श्री रामनिवास हायीठ केपेल मोतीसिंह और कैबर बोकनसिंह जैसे कवियों ने राष्ट्रीय चेतना को नये परिवेश में संभारण। सर्वथी गणेशीसास व्यास कन्हैया-लाल सेठिया मुरलीधर व्यास मेखराज ‘मुकुल’ सुमनेश बोधी और सत्यप्रकाश बोधी प्रायि ने इन बिनो बो कविताएँ रची उनमें राजस्थानी प्रगतिशील काव्य राजस्थानी समाज के दुःख बरई और समस्याओ एवं महत्वाकांक्षाओं के साथ बंध गया। प्रायः आकर राजस्थानी कवियों की सम्पूर्ण पीढ़ी की रचनाओं में ही प्रगतिशीलता का स्वर मिलता है। सर्वथी रचयिता बाराण यजानन बर्मा स्व मनुष्य बेपाबत बणपतिबन्ध म्ब्याठी बोपीरान यज़ाराम ‘पबिक’ श्रीम पंडिया कितोर कल्पना कांत नात्राराम सस्कृती सुमेरसिंह देबाबत बिलोक समी बुद्धिप्रकाश पाठीक और छातिमान भाखाब ‘उकेस’ की कविताओं में प्रगतिशील काव्य मिलता है।

राजस्थानी प्रयतिशील काव्य में परम्परा के घुटन और छटपटाहट, बिबलता के प्रति विद्रोह आर्थिक और सामाजिक असंयतियों की कसमछाहट तथा नये प्रतिमान की प्ररक्षा के स्वर मिलते हैं। उसमें धन-मानस की समस्याओं के प्रति हार्दिक सहानुभूति है, और है चेतना का नया उद्बोध जो पिटी हुई लीक और बर्षी-बर्षाई माप्यवादिता को चुनौती देकर नई सम्भावनाओं के द्वार खोलता है। इस चारा के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

- १ 'रो मत राखी बैटी स्याखी भव दिन पसटो ब्यायो ।  
 धा दुल्ल भाबस मिटसी जाडो उगसी जाँव सबायो ॥  
 बैटी जाव कठी छी राजा पापी पेट छटाई ।  
 जास जास बी बर में मांगा मगठा ने से भावै ॥  
 कोई बेवो बाठा रोटी धूँ माँ-बैटी भूखी ।  
 छीन दिना सु कोर न पाई बेवो ख्खी सूखी ॥'  
 (रामनिवास हारीठ) ।
- २ 'साथी धा उमर बैबी बससी ।  
 कबली डाली कियी पेड़ री भाव मुला से मुलसी ॥  
 (केप्टेन मोतीसिंह) ।
- ३ नाम रखबहु सिपाही—  
 राज रा छस्तर मुबा है धार सु भक्कस सबा है ।  
 सैन सुब कुभ छाँम रैखो इण बमाने री हबा है ।  
 बाप बापत सीस में बरती समारै—  
 नाम रखबहु सिपाही । (गढ़ेशीसास ब्यास) ।
- ४ 'होठा पर मुसकी बिबगाली भासू में टसकै बिबगाली ।  
 बीबण री बसती ब्योत तसे गित मरखू सीसे बिबगाली ॥  
 (कन्हैयासास सठिया) ।
- ५ 'कास मिटै बरसाँ रो—करसो बाँव कमर बर पाने  
 सोना जाँवी निपवै—धम्बर मोठीका बरसावे ॥  
 बिख मरसाँ रे मूडे मूछाँ ने घाने बड़ बाने ।  
 छैठकना नलकारो ॥'  
 (सरयप्रकाश बोधी) ।
- ६ मुकब्या महल मजूरी भूखी छप्पर पड़पा पुराणा ।  
 पड़ी भक्षारपी जाव न भाई-पेट भांगसे बाणा ॥  
 छेप ए दिन सबा न रैसी पुरवा पून पिछाणा ।

मुकज्या महम मजूर भूमा छप्पर पड़पा पुराखा ॥  
स्वाव बीपड़ी काइ सती रे भाई सटक गली ॥

(गवानन बर्मा) ।

७ "घाव भंवर मठ बरु पपारो ओर नही गल्ली रो म्हारो ।  
मने नही दुख में तो बाऊं, परती मे बेतग कर भाऊं ॥  
अब तो बिबसी बेपी पड़सी गिनपां रा बेरी सी बलसी ।  
पी काटी भायो परमात हुलका पी तो कटती रात ॥  
वेई सम्मासो बारो नाम वुषो बिमां पियाऊं घो माल ?  
तभे किमां जिपाऊं घो माल ॥ (मिथराज 'मुहुस') ।

८ ध बिबसे री जोठ जाति री भू पड़िया पू सपट उठा बे ।  
पणे बग मू मया मपेटा महमां री चोटी पहुँचा बे ॥  
बका जोस निरबण री नीइया महमां में मुछमू पोइया है ।  
बारी बाबी नीर ठोइ तु बेतो घबे करती रहबे—  
ए बिबसे री जोठ । अबे मू एक छरी सी पाठी रहबे ॥  
(भीम पड़पा) ।

९ पापी बैठपा मौज करे है बरती बूनी माण मरती ।  
गली बसी में बली भेड़िया भेड़ा नामे डरती डरती ॥  
(बिसोक धर्मा) ।

१ "मै मुजो हूँ—मै तीसो हूँ परल बारो बरब मिटाऊँला ।  
माता रे दुबे री सीगन में करे न पाव हटाऊँला ॥  
(श्रीमन्तकुमार व्यास) ।

११ बारे हीरा मोती सटके म्हारो घासू टमके रे ।  
बारी सेबां पुस पुस मुलके म्हापी सेबां कगरे रे ।  
म्हारै बीसो पान बारे बटे सीरणी गली गली ॥  
(छातिनाल भारदाज 'राकेरा') ।

१२ 'धन्वकार मठ बाख वाबसा इन्किसाव री छया है ।  
इस भाग बदसिया साया रा केइ राजा रहु बणाया है ॥  
रे भा बा भोली हसी बका के मरती बेला भाबे है ।  
भा नागण काला बहर बका डाडां में इमरठ साबे है ॥  
इण मु भाबोर रे बाबल में इक जोठ बुये है बयमगाती ॥  
(रैवतबान चारख 'कसिठ') ।

## गीतों की धारा

‘दरद को गहनाइयों में चुन

गीत की गहराइयों में चुन—

गीत है सागर समर, सङ्गीत मयत है ।

व्यक्ति का अभिव्यक्ति में प्रवृत्त विसर्जन है ।

गीत बासे राजपथ पर तू, व्यर्थ जाकर हाथ मत्त फँसा ॥

बीरेन्द्र मिश्र

गीत काव्य की आत्मा है । भावों की सरल सरस और भाविक अभिव्यक्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम गीत ही है । अनुभूति का दर्द जब गीत बनकर फूटता है तो उसकी उबलनशीलता बढ़ जाती है । रचनाकारों की यह भी मान्यता रही है कि गीत रचनाकार की अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ सिद्धि है । दो तीन या चार छन्दों में सिमटा रह कर ही गीत कल्पना के विराट परिपार्श्व को सजित संकेतों में अभिव्यक्त करता है ।

राजस्थानी के प्राथमिक गीतकार समय की सामाजिक और पारिवारिक स्थितियों तथा प्रकृति-बिर्भों को बड़ी कुशलता के साथ गीतों में उतार पाये हैं । राजस्थानी के गीतों में भरती की आत्मा जाती है और काव्य के शब्द-शब्द में उसकी बुल सुनाई देती है ।

सर्व श्री कन्हैयासास सेठिया सत्यप्रकाश बोधी मेघराज ‘मृकुल’ सुमनेश बोधी पञ्चानन वर्मा रत्नदान चरण भरत व्यास नारायणसिंह भाटी, किशोर कल्पना काम्ठ स्व० मनुज देवानत चन्द्रसिंह पाण्डेजीसाह व्यास मनोहर शर्मा ‘विमलेश’, गङ्गाराम पथिक रावठ सारस्वत राजलक्ष्मी देवी ‘साधना’ मदनमोषान शर्मा मनोहर प्रभाकर, कमलाकर रामनाथ व्यास ‘परिकर’ जबरनाथ पुरोहित भीम पटिया शांतिनाथ भारखाण ‘राजेश’ रघुराजसिंह हाड़ा भैरवी हाड़ा कल्याणसिंह राजानत चन्द्रकुमार ‘सुकुमार’ लक्ष्मणसिंह रसबन्त महेश्र भागावत बुद्धिसंकर त्रिवेदी नारायणवत श्रीमाली निरंजननाथ धापाय और किंकर कवि जैसे और भी कई नाम हैं जिन्हें राजस्थानी के गीतकारों में गिनाया जा सकता है ।

इस वर्ग में कई प्रकार के गीतों का समावेश है । जैसे—१ प्रवृत्तगीत गीत २ लोकपुनों पर आधारित व्यंग्य-गीत ३ गीत कथाएँ ४ कल्पना प्रधान गीत आदि आदि । साथ ही सृजन-सामर्थ्य की दृष्टि से भी, उपरोक्त कवियों की विभिन्न श्रेणियाँ बनती हैं जिनके विस्तृत विवेचन की यहाँ पुनरावृत्ति नहीं



है। कुछ ऐसे हैं जिनमें कल्पना तीव्र है लेकिन अभिव्यक्ति में संतुलन की कमी है। कुछ अनुभव-अन्वय विचारों को तीव्र और पुष्ट अभिव्यक्ति तो दे पाते हैं लेकिन संवेदनशीलता उतनी समस्त नहीं। कुछ ऐसे भी हैं जो लोक-वातावरण के एक ही प्रभाव को विभिन्न चिह्नों में संजोते बसे जाते हैं जिसके फलस्वरूप रूढ़ उपमानों में उन चिह्नों की दुर्भेद्यता भी होती है। लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जिनके पीठ पूर्वकपेण गीत है और उन गीतों के प्रति सिंहाय उपह्ता के और कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

वहाँ पीठों की मौलिकता और धार्मिकता की चर्चा है वहाँ राजस्थानी काव्य माहटी प्रतिष्ठा का अधिकारी है। नयी पीढ़ी के भीतकारों में नये भाव नयी कल्पनाएँ और नये स्वरूप सभी कुछ नया है फिर भी समता है जैसे उनके संस्कारों में परम्परा का सङ्गीत गूँजता है। परम्परा को प्रभावित स्वीकार करना और बात है तथा परम्परा से सामान्य होकर उसकी मिति पर नया सृजन करना दूसरी बात है। इस दृष्टि से राजस्थानी गीत-काव्य राजस्थानी लोक-काव्य के अधिक समीप है। सरलता और सरसता तो काफ़ी दूर तक नहीं है। हाँ! साहित्यिकता की दृष्टि से वे किंचित अंधे बरतल पर हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि वे लोक-काव्य से सीधे प्रभावित हैं, अपितु यह है कि राजस्थानी काव्य की अभिव्यक्ति अपनी भूमि लोक-वातावरण और लोक-सङ्गीत की धारणा को छूटी है। वह जिस वातावरण की उत्पन्न है, वही वातावरण उसकी अनुभूति और प्रेरणा का पोषण करता है।

श्री कन्हैयालाल सेठिया राजस्थानी और हिन्दी के दिने बुने मच्छ नीत कारों में से हैं। सुबानपड़ में बन्ने-बसे श्री सेठिया के काव्य में 'बन्ने' जैसी भावुकता महादेवी जैसी क्रोममता और प्रसाद जैसी धार्मिकता है। उनकी 'मिरा युग' और 'दीपकिरण' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। तीसरी पुस्तक 'पाँचदश्या' (राजस्थानी) भीम ही प्रकाश में जानेवाली है। 'रमेशिम' के सोरठे और 'मीकर' उनके राजस्थानी काव्य-सङ्कलन हैं।

श्री मेहराज मुकुल प्रान्त के श्रेष्ठ गीतकार हैं। वे राजस्थानी में हिन्दी से भी अधिक समस्त और समर्थ अभिव्यक्ति दे पाते हैं। लोक-वातावरण और मरु-संस्कृति से अनुप्राणित आपके कई गीत कवि-सम्मेलनों में सर्वाधिक लोक-प्रिय हुए हैं। 'सियाँ ठाढ़ो' भी मुकुल का अप्रकाशित राजस्थानी कविता संग्रह है। वे राजस्थानी के सरस पीठकार और श्रेष्ठ प्रयतिशील कवि हैं।

श्री ऐतदान चारु के गीतों में सामयिक माधनाओं की समस्त

अभिव्यक्ति मिलती है। काँति का स्वर उनका काव्य की विरोधता है। इसके प्रतिरिक्त श्री रेवतबाबू प्रकृति चित्रों को भी बड़ी सुबो से उतार पाते हैं। 'बिरसा बीरणी' उनकी प्रत्यधिक लोकप्रिय कविता है।

स्व० मनुज देवावत से, जो मध १८ मई १९५२ को बीकानेर-पत्ताया रेस कुर्बतना के चिकार हो गये, राजस्थानी को बड़ी प्राप्ता थी। उनके काव्य में स्वाभाविकता और युग चेतना मिलती है।

मारबाड़ क्षेत्र में पुग-बेतना का छद्म कुँकनेबासे गणेशीमास भ्यास में एक समय लोक-कवि की क्याति प्रकृत की है। उनके भीत हलधरों की प्रस्ता बने। प्रामीण जीवन और बस्तावरण पर आधारित भावने संकड़ों गीत मिले हैं। गुरव-नाटिका और छद्मिगत नाटिका लिखने में भी वे अग्रणी हैं।

राजसम्मी देवी 'साधना' के गीतों में मिठाळ तथा प्रकृत और माधुकरता का मेल मिलता है। वे धाम्यात्मिक सिद्धियों से अनुप्राणित हैं। 'बैठावनी रा पु गटपा' के कवि स्व० श्री केसरीसिंहजी बाख्खठ की पौत्री साधना भी वे काव्य-सृजन की निमग्न प्रतिभा हैं।

गजानन वर्मा के गीतों में राजस्थान की प्रकृति हरे-भरे क्षेत्र अतुएँ, बीब-जागवर, मिनख-मनुर समी का समावेश है। उनके गीतों की धँसी मीलिक है, जिसे जब वे परिष्कृत और सरल लोक-शुनों से अभिविचित करके पाते हैं तो राजस्थानी गीत अपनी सामर्थ्य का सफल परिचय देता है। श्री गजानन वर्मा मञ्जापम पविक और कस्पाखसिंह राजावत ने अष्ट अमि-गीत लिखे हैं।

श्री मधुपम संस्कर्ता प्रकृति के कवि हैं। प्रकृति प्रकृति को अपने प्रकृत संवेप में चित्रित किया है।

श्रीमन्त कुमार भ्यास प्रतिभाशाली कवि हैं। उनके स्मृति-गीतों में (७५५) में मार्मिक भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं। 'इन्दिमाव ठो ७५५ ७५५' प्रेरणास्वर प्रगतीशील गीत है।

शांतिनाम बाख्खठ 'राकेस' हाइती क्षेत्र के कवि हैं ७५५ ७५५ ७५५ हाइती का बाठावरण बोलता है।

श्री महेन्द्र भागावत लोक-साहित्य के अनुसन्धान ७५५ ७५५ ७५५ हैं। उनके गीतों में लोक-बाठावरण मुखर है।

श्री लोत्तापम हीरावत 'प्रकाश' के 'लोत्तापम ७५५ ७५५ ७५५' इके हुए गीत हैं। गीतों में समाज-सुधार का ७५५ ७५५ ७५५

श्री भीम पंडित्या की पुस्तक 'हाथ सू कतर सीतों बोरलों' प्रकाश में आई है। उनके गीतों में सरस अभिव्यक्ति और मई धितना के स्वर मिलते हैं।

श्री किशोर कल्याण कांत की 'हेमो' पुस्तक में उनके सुन्दर गीत संकलित हैं। 'सुपना रो भरप' उनकी अप्रकाशित पुस्तक है।

मोखा के कान्हू महर्षि की कविताओं का संग्रह 'गुणवन्ती' नाम से प्रकाशित हुआ है।

श्री रामनाथ व्यास 'परिकर' के गीतों में प्रकृति-चित्रण और सौन्दर्यभूमि है। उनके गीतों में कुछ नये प्रयोग भी मिलते हैं।

राजस्थानी के कुछ प्रमुख गीतकारों की रचनाओं के उदाहरण देखिये—

- १ 'भारी में उड़ता हय ममया  
पैनी में बहता पय डमया।  
ह्रीको सो फूटपो बरती पर,  
वे कुण ममया ? वे कुण पमया' (कन्हैयालाल सेठिया)
- २ घांस में हो चुगे बिड़कस्या  
बिड़करी मीठी री बाल।  
छोटी मणव भू नरो काड़े  
सुन सुन साफ करे हैं ठाण ॥ (नवानन वर्मा)
- ३ 'सावन साबरण पल बिरभा बूबा' री भणकार।  
माक बैसा बल रमो नवण बाप बहार ॥  
हरपा-हरपा जोवन भरपा बाबरिया रा बेट।  
पावस रघ सूँ बिल पड़ी मीठी बासु रैठ ॥  
(साठवीन भगेरिया)
- ४ हो भटका वे घा डल बासी घासी-रैठ बडाही।  
रुठो पैली घात मरीजी बीन जठे तरु बाये बाही ॥  
श्री रे घावा रुक मठ भाई-रुक मठ भाई।  
(गणेशीलाल व्यास)
५. छोई बरस बनावे घांसिणये हीवनू दुलावे।  
पसि पंकेरु गीठ सुणावे बिरदां नाच नवावे ॥  
छाँक गिपन में राग रंजीली बिरियां कुण बिरदाई।  
बूबां बोई रातकली में कुस हनण बरदावे ॥

नैण रिम्दाई मर मुलकाई ख्याँ राख रचाने—

ओ कुण कुण छिन भाबे । (राजत चारखत)

- ६ हूँ हिबडे में हरकाऊँ—रे बमक बाँदली रात ।  
धोरिये बैठ नीतकी गाऊँ,—जब ठंडी मंजरी पुन बसे ।  
(धीम पंढपा)
७. 'सूम सूम बायगियो पाई बादल बिर बिर भाबे ।  
घामे में मुक छिन पसका कर बीबलियो बिलमाबे ॥  
हिबई हूक छते वखी रे—घाँसुड़ा बलकाब ।  
बाँ बिल बरती फुरै साबना बसठा हिबडा ठारे है ।  
बरती हेसो मारे है ।  
(नारायणबल भीमाल)
- ८ बोसम्यो सो बोसम्यो पाण भब करे मठ बोस बेटी ।  
रात बाकी मोत बोकी जा बठे मठ बीर ठेरी ॥  
एक सुपमो टासणै री रात है मठ डेर डेरी ।  
पख मनेरघो बीर भास्यो रात मर बोस्यो पपेयो—  
ओ बणो बुलमी पपेयो ॥  
(फिखोर कस्यनाकाठ)
- ९ इण बार हिये री साज सोड़ म्हेँ छाबख ने—  
खेयाँ में ही समझम सियो ।  
निरमोही बिल री जात भाज बै माक ने—  
पनकाँ री ओ मुकाम सियो' । (रामवैष भाषार्थ)
- १० 'नाम रंग रा साइभा, मठ लाल कराबे बरती नै  
मठ मोखा बाँदी री जाबर, जानाँ लकटी नै-साँची कह बीबे  
बार रे बुलमाँरी पोड़ी पाद बे पीबे—उड़ती कोयलही ।  
(कम्पाणसिंह राजावत)
- ११ 'मुकाली दिपजो घंवर घोट, निरबका घाई ओ संसार ।  
बड़कली छाटी पीनी नाम मुलकठा नैखीँ मुरमो सार ॥  
(नारायणसिंह भाटी)
१२. 'नामबखी शू प्रेम बादनी सासू कँबर शू मोर ।  
बा बरसे मोस्याँ री नुमी—ओ नाबे रस मोर ॥  
पी पी लान मुशाबे—

हिरवे की बीणा बाने एक सी—रमठार कँपावै ॥

(मनोहर बानी)

११ 'इकटक गैणा बैसो ताके—मौठो मारु घाबेसो ।

मीरइकी रे पेती सपनो सांचो हो बरसाबेसो ॥

(रघुपतिहा हाहा)

१४ 'यन की चौकी मू डो बोबे काग डानसे बोसे हो ।

धुता ऊपर हँसे केतकी मेइयाँ मोरपा बोसे सो ॥

भाब म्हारे कोई न कोई पावणियो पपारे सा ॥

(महेन्द्र मानावत)

१२ 'भौवरी बइया बकरी रे—बरस बीतया पाँच ।

भाबत हीसे साबबो तो नाब मोरिया नाब ॥

पाँच डूँ मोठीका मँडबाय मोरियो बोस्यो मँडी भाय ॥

(इन्दुबासा पुरी)

१६ 'घापी बल्लाँ हुलोमाँ छँस्या सूखे साब ।

पौछी बई मकासाँ पण बुण काटे पाँच ॥

सपना हरिया लँस केत्या बाने सुख ।

सोयाँ कइके बीनल बाम्याँ बाने सुख ॥

सरवर बापी पात्

साय तीबा सुम्

बणया फुसामात्

सरवर बापी पात् ।

(बाँसिबाब भाखाब 'पकेब )

१७ 'सिस्वा बैसा रंग-बिरंभी सश सुबाणण फूली रे ।

सोना रो घुरबडो डम्यो चौपा लामो बरै गुबाल् ।

फुरसाँ री बोड़ी बइ बामी कर सरवर री सुनी पात् ।

मिबब मनुरी सू घर मामा काँधा मावै मेत फुबाल् ।

पण्हारभाँ पणबट सू घाबे बुबरी मुबरी बामी बाल् ।

पीपल-डाल् बुइकस्याँ बीठी हीगडो बे बे फूली रे—

सबासुबापण फूली रे ।

(बुडिसकर त्रिवेदी)

## प्रकृति-चित्रण

सुबन-परम्परा का इतिहास साक्षी है कि कवियों ने जब जब प्रकृति की उपेक्षा की तब-तब उनके काव्य की गरिमा घट गई, उनकी कल्पना विविध और रुढ़ हो गई, उनकी स्वच्छन्दता के पङ्क कट गये और वे विभिन्न संकुचितताओं एवं विकृतियों में फँस गये। प्रकृति-काव्य का सर्वांगिक पोषक तत्व है। जब कवि धर की चारदीवारी की सीमा तोड़ कर उन्मुक्त-वातावरण में साँस लेता है, तभी उसकी कल्पना अनुभूति के मौलिक सोपानों पर बढ़ती है। प्रकृति और मानव का अविभाज्य सम्बन्ध है।

‘छोड़ दुनों की मूढ धामा  
तोड़ प्रकृति से भी माया  
बाने तेरे बान-बान में  
कैसे उलझ हूँ सोचन ?

(सुमिनामन्दन पद्य)।

कवि प्रकृति के उपादानों में अपनी मनःस्थिति के उद्घाटक प्रतीक खोजता है। उसकी धार्मिक प्रकृति का जब बाह्य प्रकृति से साक्षात्कार होता है तो उसकी बनीमूल सम्बेदना काव्य में मुखर हो उठती है। प्रकृति मानव को मयी लावणी देती है, और देती है मौलिक एवं अनूठी कल्पना। प्रकृति के बिछेरे महाकवि कालिदास और बंभ सूर्य के काव्य में से प्रकृति हटा देने पर क्या बचता है ?

राजस्थानी में नदी भारत के कवियों ने प्रकृति को विविध रूपों में संभाषित है। नारायणसिंह नाटी की ‘सांझ’ बन्धसिंह की ‘धूँ’ और ‘बादली’ नानूचम संस्कर्ता की ‘दसदेव’ और ‘कम्पायण’, गजानन वर्मा की ‘भरती री धुन’-मुस्तकें प्रकृति-काव्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

‘सांझ’ नारायण नाटी विरचित लघु काव्य है जिसमें मकमूमि की संघ्ना का सर्वांग सम्पूर्ण चित्र उतारा गया है। सांझ के चित्रण के साथ-साथ कवि अपनी अन्तर्मजिनाओं को बोझता बस कर प्रसङ्ग की मार्मिकता को बढ़ाता है। सांझ वस्तुतः प्रकृति और प्रेम का सुन्दर सम्बन्ध है।

बुमाला जरसां अछमिण तीर, मिरय से नापो नी इक बाण ।  
मिटे किमि बय में फिणी बतभ, बन्व री मन्व हेसी रो मान ॥  
पामलै हीडे मन्हा बान, नावडी हानरिये हुसराम ।  
कंठ में धलके नेह धपार, हिये रा हार हिजोसा चाम ॥

भी नाटी में अनुभूत प्रकृति-चित्रों का अपनी मनोवाचनाओं से संपुक्त

करके उसे ससक्त अभिव्यक्ति देने की बड़ी सामर्थ्य है और चाँक' प्रकृति काव्य उसका सुन्दर उदाहरण है।

श्री अन्नसिंह राजस्थानी-साहित्य-सरस्वती के उन तपस्वी साधकों में से हैं जिनका व्यक्तित्व कवित्व से पूरक नहीं है। अन्नसिंह भूमत कवि हैं तत् परचाए कुसु और।

'सू' और 'बाग्नी' अन्नसिंह के प्रकृति-काव्य है वैसे उनके नामों से ही स्पष्ट है। राजस्थान मरु-प्रदेश है। यहाँ रेगिस्तान की उष्णता को और अधिक तथा और ऊँचा वेगे बाग्नी धूर्ण निरन्तर जमा करती है। वर्षा के बावजूद की उपलब्धि यहाँ घटती से नहीं हो पाती। मानसून की गिनी चुनी हवाएँ विद्या भूलकर इधर घाटी है और गिनी चुनी बड़ियों के लिए सीमा का मन हुरपा कर पुन उड़ जाती है।

'सू' और 'बाग्नी' राजस्थान में पौष्प और वर्षा की स्थितियों का बयान और मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करने वाले काव्य है। दोनों प्रकृति-काव्य के सुन्दर उदाहरण हैं। अन्नसिंह की शैली में उचीक चित्रोपमता है।

'बाग्नी' में बीच-बचत पर वर्षा के प्रभाव के परिचायक ११० श्लोक हैं। निम्न पंक्तिया में वर्षा-आगमन के आनन्द और उस्तास का बर्णन देखिये—

'बटा टोप धामो बिर्मुओ छुओ नुव नर राव।

धाबी बीबा नुल रो हिमो हिधोमा काम ॥

धम्बर में उमड़ी बटा धामै घटकी धाल।

बड़ बड़ छाटा धोन् में मीर सँबारे पाँव ॥'

(बाग्नी)।

श्री तानूराम संस्कृती का कर्नायण (कालीबटा) भी प्रकृति-काव्य है। प्रो नरोत्तमदास स्वामी के मतानुसार प्रकृति और मानव-जीवन का वीसा सहस्रवर्ष बर्णन इस छोटी सी रचना में हुआ है, वीसा धम्मक बेकने को नहीं मिताता। कर्नायण में प्रकृति-चित्रण के माध्यम से प्राचीण जनता की जीवन काया का बर्णन है। 'कर्नायण' वस्तुतः प्रायः-प्रकृति का बाख्मासा है।

मड़क मड़क बड़ना हुवे—बर नुई बम्भुक।

बड़ बड़ धम्मलिया डिगी—पड़ पड़ पड़ना टूक ॥

देख कर्नायण बवा प्रेम बरसावे पाणी।

बरसल बीठी पो 'र' डये ना भण विसाखी ॥

चित्तई जाबी जितो पड़पो पाणी रो नर नर।

बीबन् पलका बली पाड़ सोने रा घरबर ॥

हर प्राया संभलण कीनी खुब रचायो लेन है ।  
प्राय सुबाणी सोन बणायी प्रापी बीबल लेन है ॥”

श्री संस्कर्ता का 'बसदेव भी प्रकृति-काम्य का सुन्दर उदाहरण है । इसमें भीम बौबड़ो कोय मझसो, धीर बाल-पौष बसदेव तथा भूमो औड़ो बोरो बदेड़ो धीर बाण-पौष भूमिदेव-बस देवा की स्तुति है ।

'धमम वायरो' संस्कर्ता की एक अन्य रचना है ।

गजानन बर्मा और कस्याणसिंह राजावत के लोक-बाठावरण से संपृक्त मधुर गीतों में प्रकृति का सुन्दर चित्रण मिलता है । उनके ज्वनि-गीतों में प्रकृति की ध्वन्यात्मक झङ्कार सुनती है । सर्वश्री मेघराज 'मुकुस' मगोहर शर्मा गिरिराज भोंबर, सत्यप्रकाश बोधी गणेशीराम व्यास मगोहर प्रभाकर, कमलाकर, लक्ष्मणसिंह रसबलत चन्द्रकुमार सुकुमार' नाटयणरत्न श्रीमाम्नी भीम पडिया और कितोरकल्पना कांत की कई कविताएँ प्रकृति-चित्रण के सुन्दर उदाहरण हैं—

१ प्रांगण में वो जुमै बिड़यस्यां बिबदेड़ी मोठा री बाल ।  
छोटी गणह भू गरो काई सुम सुम साफ करे है ठाल ॥  
(गजानन बर्मा) ।

२ 'भूम भूम वायरियो गाबै वायस पिर बिर प्राबै ।  
प्राय में लुक छिप पलकाकर, बीजनियां बिलमाबे ॥  
हिबके हूक उठे भरती रे प्रासुड़ा बसकाबे ।  
पां बिन परती छुरे साजना बसता हिबड़ा करे है—  
बरती हेसो मारे है ।

(नाटयणरत्न श्रीमाम्नी) ।

३ गाबो माबो जग बजाओ औंभी रयां में चासा बागां में,  
भूमो री रत पाबणी—बसलत छपु प्राई रे ।  
(रामनाथ 'कमलाकर') ।

४ बाबम रे उठे जोबन से—बिजनी री प्रास्यां लड़ बाबे ।  
धम्बर रा एक दगारा पर, भरती लजनाली पड़ बाबै ॥  
बणुणुणरो बन निरन जाई उम्मास जगातो हिबड़ा में ।  
ऊंचे चौबारे बिण्डुणु री प्रास्यां धम्बर में गड़ बाबै ॥  
पिर-पिर मयां री है रिमभिम ।  
मिट मिट कर उमरा सरगम ॥ (गिरिराज भोंबर) ।



- ३ 'पूजम री रात मुहाबल है पुनक्ति पिरबी रो प्राणल है ।  
 घामे में जयती चाबड़सो म्हाउ हिवडा न हुरबाई ।  
 (मनोहर प्रमाकर) ।
- ६ बी घाई है ज्युली में परभाठी चारा पाबलिबा ।  
 रल मुणिये रब पर बीठा है राया में नार रिभ्राजलिमा ॥  
 (मयमणसिंह रसबन्ध) ।
- ७ 'सणिया ठोड़ बैबड़ो बाटपो-ऊचो हीबो चास्यो  
 हीबे के साथे यो हिरबो-ऊचो ऊचो चास्यो ॥  
 (मनोहर सर्मा) ।
- ८ 'बोरीं में रमता निरम्मा म्हें  
 सोने सी मोरी बाबू पर मोठी सा बक्रिया निरम्मा म्हें ॥  
 (कस्याणसिंह रामावठ)
-

## गीत-कथाएँ

राजस्थानी में ऐतिहासिक तथ्यों और किंवदंतियों पर आधारित कई गीत-कथाएँ लिखी गई हैं। इस संबंध में सर्वप्रथम मेहरराज 'मुकुट' मनोहर शर्मा, सत्यप्रकाश जोशी और कन्हैयालाल सेठिया के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। श्री परछेरीलाल व्यास ने कई श्रेष्ठ संगीत रूपक लिखे हैं जिनकी कथा वस्तु और प्रेरणा प्राचीन-जीवन को छूती है।

श्री 'मुकुट' की सेनाली और 'कोबमदे' पद्म-कथाओं में क्षात्रधर्म और प्रेम-मार्ग में धारमोत्सर्ग के चित्र हैं। सेनाली का ऐतिहासिक कथामक जिसमें रणभेद में जानेवाले प्रियतम को हाड़ी रानी द्वारा कटे हुये मस्तक की निघानी देने का वर्णन है राजपूत नारी के क्षात्र धर्म-मातल का उत्कृष्ट और प्रमद उदाहरण है। श्रीरमूनि राजस्थान में ही मही' अपितु सम्पूर्ण भारत में यह कविता काफ़ी लोकप्रिय हुई है।

राजस्थानी मद्य और पद्य के क्षेत्र में साहित्य की शायद ही कोई ऐसी विधा छूती हो जिसमें बिराऊ के मनोहर शर्मा में सूजन न किया हो। 'गीत-कथा' नाम से उनकी गीत-कथाओं का एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। 'मरबण' उनका एक प्रेम-कथामक काव्य है जिसमें मरबण और मासबणी को साम्प्रतिक प्रतीक माना है।

श्री कन्हैयालाल सेठिया की 'पातल-वीचल' लोक-प्रिय कविता है जो गीत कथा का एक सुन्दर उदाहरण है—

‘मैंने धाव मुछी है य कां कसम प्रब रांड हुवेना रजपूती ।  
 मैंने धाव मुछी है म्याना में तरवर रेवेना प्रब सूती ॥  
 धां हाया में ठसवार यकां कुण रांड कबै है रजपूती ।  
 म्याना रे बरले बैरपां रे, सीता में रेवेना सूती ॥

(पातल-वीचल)

जातिनाथ भायदाज 'उकेस' ने हाड़ोटी क्षेत्र की एक लोक-कथा के आधार पर 'शाबली-रीज' गीत कथा की रचना की है। गुर्रर-परिवार का एक मज-बिबाहित मजमुखक बम्बल की बाड़ को पार करके भी अपनी प्रियतमा पत्नी से मिलने को प्रातुर है। वह इसी प्रयास में बाड़ की बचती घाट के

इक्यावन

साय वह निरुत्पत्ता है। परन्तु भी उसकी गहायता को बीड़री है। अंततः  
शाही के बाव उगका प्रथम और अन्तिम मिसल पम्बल की भाषा में ही होता  
है और वे वह निरुत्पत्ते हैं।

इस पुस्तकालय गीत-कथा का एक प्रसंग प्रस्तुत है—

तब हार मान बोम्बो प्रीतम—भव म्हाग बस की बात नहीं।  
राणी म्हाकी ठकरीय में या धाव मिसल की रात नहीं ॥  
सावली तीव ई परती वी री दुनियाँ सुब मनायी जा।  
गाया जा मन भर गीत साय जोरों सु बोल बजामां जा।  
पम्बल जोरों सु गरय्यां जा मत सुणवा दे म्हारी बातां।  
दुनियाँ मे घाँधी कर चानी ये कानी सावण की रात ॥

श्री तानूराम संस्कारों में भी कई पद्य-कथाएँ लिखी हैं। श्री सत्यप्रकाश  
बोधी के 'सहस्रबाव' संग्रह में भी 'अवली' के सम्बन्ध की गीतकथा है।  
हणु ठसिह की बेने रो बलिदान' और 'कम्पीदान की बिबा' का उल्लेख भी  
भावश्यक है।

'तीरण पर पावु बसु बनडो सोहे हो पीठ कास भी री।  
बप सकै जिवा कवि री वीहा उसु बेना री सोमा जी री ॥  
अन्तर में रव उमैवो ही सुब पर रजवट रैप बरसे हा।  
माणस उर वन्नी उर बणा कुणु जाई किठये हरसे हो ॥

(बिबा कम्पीदान)

श्री गणेशीनाम व्यास ने 'घोपिरा' व सङ्गीत-कथक की शैली पर कई  
सधु-नाटिकाएँ लिखी हैं जिनमें कथा का भावार्थक प्रवाह रहता है। 'अम्भर-  
रजो' और 'बाली-उतरण' इसी प्रकार के रूपक हैं जिनमें सरस और मौलिक  
काव्य सोक-संकीर्त से अनुप्राणित मौलिक पुनो और चेतना के स्वर एक साथ  
मिलते हैं। 'अम्भरजो' का एक प्रसङ्ग देखिये—

मरद—'इलकुय मीव हृयम मानजा।  
कयो पकयो है काम खेत में  
बसु बीबलु बन् हास्यो धापी  
कुणु सुतो धी नीर में ?

भुगावी—'नकापली रो ताबुक दीनो  
मो सुतो धी नीर में

बागो मुकुट खान

सहेल्यो बूढ़ बरपो बन धान में ।

श्री मनोहर प्रभाकर, बिद्वनाय वर्मा 'विमलेश' और रामनाथ म्यास 'परिहर' ने भी कई सङ्गीत रूपक लिखे हैं ।

### प्रबन्ध काव्य—खुश्ट काव्य

श्री मनोहर वर्मा प्रबन्ध-काव्य से लेकर सजित गीतों तक, कम्पना की डोलाई और भावों की पहचान से लेकर बासोपयोगी साहित्य की सरसता और सरसता तक तथा मौलिक सूत्र के साथ-साथ राजस्थानी साहित्य के अनुसन्धान शोध और पुनरुत्थान के दायित्व को बड़ी लुब्धी के साथ निभा रहे हैं । राजस्थानी भाषा और साहित्य की समस्याओं सिद्धियों और सम्भावनाओं की जितनी अधिक जानकारी भी वर्मा को है उतनी बिरला को ही हो पाती है । 'बरवा' के सम्पादक श्री मनोहर वर्मा श्रद्ध-कवि के साथ-साथ छोक एक अनुसन्धानकर्ता तथा खेप्ट और सन्तुलित प्राज्ञोचक भी हैं ।

प्राप्त जानकारी के अनुसार श्री मनोहर वर्मा ने अब तक १५ काव्य लिखे ६ काव्यों के अनुवाद किये और जन-काव्य-मामा की पाच किशतें प्रस्तुत की हैं । काव्य के प्रतिरिक्त अन्य रचनाओं की चर्चा पुपक प्रथम्य में की जायगी ।

श्री मनोहर वर्मा रचित काव्य-ग्रन्थों की सूची इस प्रकार है—

१ भरवामी की धारमा २ गीतकण ३ घोरो का सङ्गीत ४ बूजा ५ अमर-रत्न ६ गोपी-नीत ७ मरवण ८ पछी ९ बापू १० छतई ११ गजमोती १२ बीर-नीत १३ ईस-बये १४ अरमा १५ म्हारो मांज धादि ।

जनकाव्य मामा के अन्तर्गत धारमा निम्न रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं ।

१ गोपीचन्द २ भरवरी ३ पार्वती-मङ्गल ४ रनावे ५ ठावादे ।

राजस्थानी काव्य-अन्धार में 'बूजा' 'अमर-रत्न' 'गोपी-नीत' और 'बापू' धादि काव्या की बड़ी प्रतिष्ठा है ।

'बापू' खण्ड-काव्य में मानवठाकाव का स्वर सर्वोपरि है । इसमें युवावतार गांधी के जीवन की झंकी प्रस्तुत की गई है ।

'अमररत्न' कठोपनिषद् की धार्म्यात्मिक छाया में पोषित प्रबन्ध-काव्य है जिसे ४ तपों और बुक २१६ छन्दों में संवारत गया है । साबक माप की बिकार कपी बापाओं को पार करता है, फिर मृत्यु के रहस्य को देखता है ।

श्री शर्मा ने यथार्थ ऋगत की अनुभूति में मृत्युमोक को चित्रित किया है। इतने निराल्ट और दुःख विषय को सीधी छापी भाषा में प्रतीकों द्वारा समझाया गया है—

‘रात दिवस का मेद भुसाकर—सदा कुमा बहु बिफट कपाट ।  
 धरु गिखटी बन भावे जावे—पण सूती लागे या बाट ॥

‘मरबखु’ डोसा मारु मोक कथातक पर भाषारित प्रमाख्यातक प्रबन्ध काव्य है। डोसा मरबखु और मासबखी का क्रमध बीब विद्या और प्रविद्या के प्रतीक मानकर उन्हें धार्म्यात्मिक रूप दिया गया है—

‘मासबखी ब्यु प्रेम बारती सखु करैर ब्यु मोर ।  
 बा बरसे मारया री सुमी बो भावे रस मोर ॥  
 पी-पी तान मुणारी—

हिरदी की बीणा भावे एकरी—रसतार कंपारी ॥

प्रबन्धों गारी-बीबन की समस्याभा का सहायुक्ति-पूर्ण चित्रण है जिसमें छीवा अनुभूतना श्रोपरी मसीबखु धारि धारि धारिया के प्रसङ्ग है।

‘पंछी श्री शर्मा का एक अन्य काव्य है जिसे भी प्रबन्ध काव्य की संज्ञा दी गई है। ‘भरावली श्री धारमा’ में दुर्गाबाध मीरा बन्ध धारि ऐतिहासिक ब्यक्तिता की जीवन-वटनाओं का चित्रण है जो वस्तुतः प्रसिद्ध काव्य है। ‘रसबाट’ ७१ छन्दों का काव्य है। इडतोय स्तुभ की बार्थिक पत्रिका में ‘म्हारो-याव’ धीर्पक से शर्मा की एक और बालोपहोगी विस्तृत कविता प्रकाश में आई है।

‘रामदूत’ लाडनू के श्री श्रीमत्कुमार व्यास का १४ शर्मा का प्रबन्ध काव्य है जिसे वस्तुतः लख-काव्य ही कहना प्रथिक उपयुक्त होया। काव्य का अतएव पूर्वार्ध से प्रथिक पुष्ट है। इसमें रामभक्त हनुमान की कथा है। शमीसकों के अनुसार ‘रामदूत’ राजस्वामी काव्य की प्रौढ़ कृति है जिसमें मदमाया का प्रोव गिखरा है। बख्तग कही-कही सुन्दर और चित्रोपम है। काव्य की भाषा प्रचलित बोधपुटी है जो पत्राहमयी और प्रचलपुण्य पुक्त है।

बस्यो पवन की बाल बाय हनुमान हठीलो ।  
 त्याज समन्दर भाकर तरवर धन्दर लीलो ॥  
 काम-मगन है एक लवन है जिम्मा राम रटता ।  
 हाव बिबाता लखयलाल रो ब्यु कर कष्ट कटता ॥

‘वे राबखु में रमती बोवे नर भाई तु बीर’ छीवा के प्रति अनिरनास

का छोटाक होने में सटकता है। इसी प्रकार बाट जोट धरखोट-खोट में भी न मने जैसे-सी' बेस-काल के विपरीत बतव्य है।

'साम्' प्रकृति-काव्य के रचयिता श्री मारामणसिंह भाटी का 'दुर्गादास' परम्परा के काव्यों में आता है लेकिन दुर्गादास की वीसी राजस्थानी को एक नहीं देत है। दुर्गादास के इतिहास प्रसिद्ध कथामक का मौलिक कल्पना में संभारा गया है। दुर्गादास में छन्दों का मौलिक प्रयोग भाषा का प्रवाह तथा अनुभूति की परिभा है। सम्पूर्ण काव्य मुक्तक-छन्द में रचा गया है जो राजस्थानी में नया प्रयोग है—

जई कट

प्राची रे पम रणै

उठ्ये धरक धाक लोमी

सिखर सोहृद केबाण कनीसी बीज मू किरण

नाले पलक

“ भासा लै भासु पलकी ।

श्री चम्पसिंह के 'मू' धीर बाबली तथा श्री भाटी का 'साम् उल्लाप खोटि के प्रकृति-काव्य हैं जिनकी चर्चा प्रलय से की जा चुकी है।

श्री मनोहर वर्मा का 'कुर्ज' धीर मुबीबकुमार मधुवाल का 'सोर' नीति-काव्य है।

ठाकुर रणबीरसिंह रचित 'प्रताप प्रसस्ति' को राजस्थान-साहित्य प्रकाशनी में पुस्तकृत किया है। इसमें मेवाड़ के गौरव हिन्दुओं के सूर्य-महापद्म प्रताप की मधु-भाषा है।

‘धरज्वर पुरक उचार कर राकी रघुकुल रीत ।

रंग प्रताप महाराज मे-बेस-ममल-कुल बीत ॥

संकट बन बकट सहा पारण कर मन धीर ।

दाज बाज रासी घटन, रम प्रताप 'रणबीर' ।’

'धरती री धीर' श्री किरोर कल्पनावांत का अप्रकाशित कव्य-काव्य है जो जगज्जगनी सीता के जीवन पर आधारित है।

सूर्यमस्त दूत धीर सतसई के संपादक श्री मठराम गौड़ राजस्थानी के मन्त्रे कवि हैं। 'दे-नेस्तान' धी वीड का एक उत्तम कव्य-काव्य है जिसमें राजस्थान की धरती के प्रति पट्टी धारणीयता के दर्शन होते हैं।

'बसुदेव की मानूषम संस्कर्ता का अण्य धीमी पर लिखा गया [काव्य है, जिसमें मङ्ग-प्रकृति का वर्णन है। 'बटोही' उनका कथा-काव्य है।

श्री बीसठसिंह भोठा धरविन्द' रचित 'मेबाड़ मां' मेबाड़ क पीरव की गाथा है। मापा ये सरलता व स्वाभाविकता है। प्रकृति धीर जन-आपरख के प्रसन धर्षिक सजीव है। 'मेबाड़ मां' बरली-पुत्रा के त्याग धीर बनिवान की गाथा है।

मनोहर धर्मा मङ्गुस' की 'राजस्थानी गुज' में धूरधीरता धीर बीसठ सतीत्व-महिमा पारिवारिक एकता भारतीयता धीर अम्भारत्मप्रियता की बर्णन है। नीति-साहित्य की इस पुस्तक में २१६ सोरठे है।

'सधि बिना बिचार, जीवन एसे जायसी।

सोभ्या पावे सार, धमर कीर्ति ए मङ्गुसा ॥

'बागठी बोठा' श्री मिरबायीसिंह पङ्कहार की पहली प्रकाशित रचना है जिसमें मेपनाथ सिंसपाल पुक पाङ्गुनी पाठल अक्षरमान डू पवी-अधार की धीर वापु धार्षि तायकों की जीवन-व्यमाधों के माध्यम से उत्साहवर्षक काव्य रचा गया है।

"कर मेव सारो जगत बैर, वो काडो धर्षे बण्यो कोनी।

भारत मे मुजबम्सु मु लोसे माई वो मात बण्यो कोनी ॥

पा बाठ खरी है, कही ठोक मरली स्पु राव डरु कोनी।

मुक ब्याडे बारे बरणा पर, ठा के ये कहे मरु कोनी ?

मरणो तो घटम जीव रो है, इण पर ब' कोई बावे है।

करना ये खेती निपनी है इतिहास बोमतो बावे है ॥'

(बागठी बोठा)

प्राथमिक राजस्थानी काव्य की पुनी हुई पुस्तको का उत्पन्न यहाँ किया गया है—

'मू-बाबसी धीर कहकुरली (बात्रसिंह) कतापण-समय बायरो धीर दसवीं (मानूषम संस्कर्ता) कुजा-अमरधन-मरखण व गोपीमीठ धार्षि (मनोहर धर्मा) धार्षि धीर पुर्षावास (गारायणसिंह भाटी) भूमको (बाबन धर्मा) रामकृत (धीर्मंत कुमार ब्याल) मरभारती (मौगीबाम अतुर्बेदी) सतपत्नी (विभलेप) मझाई महिमा (द्विपत्ताजबाम) नवी रापली (धूमनेष बोधी) मू गामोठी (मोमराज मोगल) सरखर रा सोरठा (सरखर) नवीनमीठ (पुस्वोत्तम मेनारिया) पत्र प्रमाकर (पठेकल्लडबम्)

प्रताप रा रंग रा ब्रह्मा (बसवंतसिंह) रमणिये रा सोरठा (निर्मल),  
 बुद्धसार-सती घटक कानिये रा सोरठा और भासा घटक (उद्यपराज ऊजल)  
 मोर्या री कंठी (शिवचन्द्र भरतिया) घट्टी रा गीत (निरंजननाथ  
 भाभाय) बभुर बिठामणि महिम स्तोत्र और बन्धोपर स्तोत्र (भतुरसिंह),  
 रसिक-बिनोब (सज्जनसिंह) गुणबन्ध (कान्हू महपि) केर काइ बाबण  
 (रघुनाथसिंह) हाम गु कवर सीतो बारलो (मीम पञ्चपा) कन्दोस रो  
 बमानो होली रा होको और गोर्ण रो मोटामो (बीमूसास सोडा) मजब  
 रो मोटामो (मस्त योमी) मेकाइ ना (दोलतसिंह-मोडा) ग्यास बी ने मुतो  
 (धोमबीनाम) गीत पञ्चीसी (हीरासास शास्त्री) कामण मुम मुण मिरा  
 (तेजाराम) होमी रो कुणकणियो (गुण्यपुरी गोस्वामी) रामदेव प्रबास  
 (पुरोहित रामसिंह) रामदेव लीनामूठ (लक्ष्मीवत्त वाटूठ) थोका गीत  
 (जोनाराम हीरावत) राजस्थानी होमी सगीत (किकर कवि) केहरि  
 "काघ (कवि बस्तावरजी) कानिया घटक (मुमनसिंह) महामारत को  
 री मरौस और घटक बडी के मस (पी नाचमण प्रबास) और राजस्थानी  
 बूच (मनोहर घर्मा मजुम) ।<sup>१</sup>

### दूहा-साहित्य

दूहा शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रामाणिक बानकाजी उपसम्प नहीं  
 होती। दूहा प्रपन्न ग का प्रत्यन्त ही साइसा छन्द है। डा० हजारीप्रसाद  
 द्विवेदी के मतानुसार दोहा ही वह पहला छन्द है जिसमें तुक मिलाने का सर्व  
 प्रथम प्रयोग हुआ।

दुष्ट विद्वानों के मतानुसार कानिदास के नाटक 'बिक्रमोबधीयम्' का  
 निम्नलिखित दोहा इस छन्द का प्राचीनतम उदाहरण है—

"नद्र बाण्डे मिघलोघण्टी-णिसि प्रब कोई हुरेई ।  
 बाबणू एब तदि सामस घाटहूष बरिसेई ॥

मैंने समझा था कि मुस के समान नेत्र वाली मेरी उबंठी को कोई रासस  
 हर कर ले जा रहा है पर यहाँ केवल नव तद्वि से युक्त कोई कामा बावस  
 पानी बरसा रहा है ।<sup>२</sup>

नाटक के इस प्रपन्न ग माय को दुष्ट विद्वान् प्रसिद्ध मानते हैं अतः यह  
 कानिदास की ही रचना है इसमें सन्देह है। पर यह दोहा ७ बी-८ बी सदी

१ मरवाणो मानिक से सामार ।

२ घोष पत्रिका अग ११ अङ्क १ का सम्पादकीय ।



का प्रयोग माना जाता है अतः ब्रह्म छन्द का प्रयोग उत्कामीन समय तक तो मिलता ही है।

गुजराती के विद्वान् श्री केसवराम कासीरामजी ३ वीं शताब्दी से आर्षा छन्द के माय-भाव बोहे मासिक छन्द का प्रयोग शुरू होता मानते हैं।

अपभ्रंश से आने हुए बोहे को जिसे हिन्दी में बोहा कहा जाता है प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी में (जिसमें अनी गुजराती प्राचीन राजस्थानी और प्राचीन हिन्दी धाती है) पास-पौस कर बढ़ा किया।

बोहे का सर्वाधिक संस्कार राजस्थानी कवियों की भाषा से हुआ। अर्थात् बचनिका प्रहेलिका लौकोक्ति लब्ध-काव्य प्रबन्ध-काव्य मुक्तक—सभी में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। राजस्थानी वीर-काव्य का विपुल बोहा-साहित्य इस बात का प्रमाण है कि वीर-मुख्यों में अपने कर्तव्य और स्वाभिमान के लिये मर मिटने की प्रेरणा भरनेवाला काव्य, बहुत कुछ ब्रह्म में ही मिला गया है।

‘राठीक रत्नसिन्धु की बचनिका’ में यह आमकायी मिलती है कि १८ वीं शताब्दी में ब्रह्म काव्य प्राथमिक लोकप्रिय था। उस समय के कुछ प्रमुख ब्रह्मों की नामावलि प्रस्तुत है।<sup>१</sup>

१ पटियाळ ब्रह्म २ बेमके वाड बचन रा ब्रह्म ३ एकलपिक बाटाह रा ब्रह्म ४ मुक माटावली रा ब्रह्म ५ रावरिणमत रा ब्रह्म ६ राव ऊमर रा ब्रह्म ७ करण रामीठ रा ब्रह्म ८ लैबसी गुपा रा ब्रह्म ९ बीमल पत्ता रा ब्रह्म १० बीपा डूम्या रा ब्रह्म ११ मिथीराव बीठावत रा ब्रह्म १२ ईसर बीबावत रा ब्रह्म—आदि-आदि।

राजस्थानी काव्य में ब्रह्म के कई रूप मिलते हैं, यथा —

१ ब्रह्म ब्रह्म २ सोरठियो ब्रह्म ३ बड़ो ब्रह्म ४ तुम्बेरी ब्रह्म ५ बोको ब्रह्म।

हिन्दी में बोहा छन्द का एक ही रूप है जिसके पहले और तीसरे चरण में ११ ११ तथा दूसरे और चौथे चरणों में ११ ११ मात्राएँ होती हैं। राजस्थानी और गुजराती में उसके चार भेद हैं।<sup>२</sup> पहला रूप हिन्दी के बोहे के समान है दूसरा हिन्दी के सोरठे के समान जिसे सोरठा कहा जाता है। तीसरे भेद में प्रथम और अगुर्न चरणों में ११ ११ मात्राएँ तथा द्वितीय और तृतीय चरणों

१ सम्पादक कासीराम वर्मा व का रघुवीरसिंह।

२ साहित्य सम्मेल (अवस्त १९३४) राजस्थानी भाषा और साहित्य की बीबी (डी बुधनसिंह)।

में १३-१३ मात्राएँ होती हैं। चौपा मेत्र इतका उलटा होता है। प्रचात् प्रथम और अतुर्वं चरणों में १३ १३ तथा द्वितीय और तृतीय चरणों में ११ ११ मात्राएँ होती हैं। कुल चारों में ११ ११ मात्राओं वाले चरखा को पिताया चापा है।

राजस्थानी साहित्य के भारम्भ-काल और मध्य-काल में रचित बृहों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं —

भारम्भकाल—

- १ नवपल धरिया मगाड़ा मयसि बबकह नेहु ।  
इत्यन्तरि खरि भाक्सिह, उब बापसि सिहणैहु ॥
- २ पढ़े पौडलाह, कटकावण से कोद करे ।  
बोरं ये बसवाह, भासू भावे इतिवा ॥

मध्यकाल—

- १ पटकू मूछां पाख, के पटकू निब ठन करद ।  
बीनें तिक बीबाण इस बो महली बाठ इक ॥
- २ मोभौं साम्या भाव भी येहूँ भावे बणा ।  
भइका तो उमठव रोसां मू ना राबिवा ॥

प्रागुक्त राजस्थानी-काव्यों में भी बृहों का बड़ा महत्व है। कहा जा सकता है कि परम्परा की इस विरासत को धारण राजस्थानी-साहित्य जितना सम्भाले हुए है उतना हिन्दी नहीं। नये कवियों में बृहों छन्द के सीमित क्षेत्र में भी अपनी गई अभिव्यक्ति को बाधा है। बहुत सम्भव है कि राजस्थानी कवियों की अपनी रचना-प्रक्रिया और उसकी प्रवृत्ति में भी बृहों बनाने से ही सबसे अधिक सहायता मिलती रही हो।

श्री मनोहर धर्मा का 'भरवली की आत्मा', 'राजस्थानी महावीर गाथी' 'राजस्थानी बुद्ध-गाथी' और 'राजस्थानी कृष्ण गीता' बृहों छन्द में ही लिखी गई हैं।

सतसई परम्परा पूर्णतः बृहों काव्य है। सूर्यमस्त और रामदास महिमा रिया की 'बीर सतसई' राजल मरेन्द्रसिंह की 'बीरपूजा सतसई' तथा कई अन्य अपूर्ण सतसई काव्यों में इसके उदाहरण देखे जा सकते हैं। कवियों की बीबीबाब के कई अन्य बृहों छन्द के हैं। उदाहरण उदाहरण की 'बुद्धवार घटक' ठाकुर कुमानसिंह का 'कालिका घटक', मीरीनाम अतुर्वं की 'महागाथी', चन्द्रसिंह के 'शु और बादली', मोयराज मंगल का 'मू पा मोती'

जन्मदेवर ब्यास का सरवर रा सोरठा' मनोहर धर्म 'मजुल' का 'राजस्थानी गूण' दूहा-काव्य के अष्ट उपाहरण है।

सर्वभी पुंगवसिंह बहीप्रसार प्राध्याय भरत ब्यास माताहीन जयेरिया सौभाम्यसिंह 'देवावत गुरलीधर ब्यास वेसरीसिंह राजतरनी देवी 'सावना' धीर धीरसिंह ने भी दूहा-काव्य रचकर प्राधुनिक राजस्थानी-साहित्य में दूहा-काव्य की प्रतिबुद्धि की है।

प्राधुनिक काम के कुछ दूहे प्रस्तुत हैं—

१. बिल बल भूल न बावता सँव गवव गिहराज ।  
ठिण बल बवुक ठाबड़ा ऊबम सँवै प्राज ।  
(महाकवि सूर्यमल्ल)
२. सोरठिया दूहा  
'मागठ देस भुबम गेहक की पूमी नई ।  
सेसनाय सरबन मारी बाम्बो मारिया ॥'  
(उदयराज सम्बलन)
३. 'जे करसी बिलसी हुसी प्रासी बिल गुरीह ।  
ये मई किलरा बापरो मगती रजपूरीह ॥  
(नाभूवान महियारिया)
४. 'सुरज भुजटो प्राबियो प्रायो डाँठर सँव ।  
बरा बरगु मन बार जब बैठपो पाट बसत ॥ (बन्धसिंह)
५. 'कुकनीबान फलुरिया पटपटिया बैपीर ।  
इसका धनपठा मरु कण सेवै गम्भीर ॥  
(गुरलीधर ब्यास)
६. 'गुरवर महल न मानिया बीरु धड़ी कुणपाल ।  
सरब परम पाही पवन फोग बली जग डाल ॥  
(सौभाम्यसिंह देवानव)
७. 'मुल मोडपो मई काम में बीम्हो कुल मई बम्प ।  
मरु करब पत्ती मरु प्राप रह्यो गित बम्प ॥  
(रणवीरसिंह)
८. 'सूर धाई बालता ऊमा बेठी मान ।  
बी बिल गुरवर राजरो तरवारुँ री ज्ञाय ॥  
(बणपति स्वामी)

९ 'बम्बा पूछ मरोइजे जीन्वी टिचकारपाह ।  
नाम्न भिसुगारपां म्हे चारण रे बयखाह ॥  
(पतराम गौड़)

१० 'बास्यो बड़ बहुबाण पास्यो पण प्रधिराज पण ।  
हास्यो पत हिबबाण, बास्यो कनबन बाब भिर ॥  
(राजस मरेन्द्रसिंह)

झोड़ो पूहो —

११ 'भोड़ा भूधर रोम सुणे पती रा सुन्दरी ।  
सोम कमाड़ा पोम के बा हँसी ॥  
(सांजलबान भासिया)

### कहमुकरणी-पैरोडी-मरघ सिलोका

कहमुकरणी साहित्य का एक विशिष्ट रूप है। संस्कृति के साहित्यकारों ने उसे अपभ्रंशित श्लोकार के अन्तर्गत लिया है। हिन्दी कवियों में कबी बोसी के प्रथम कवि 'अमीर खुसरो' ने बहुत ही कहमुकरणियाँ लिखी हैं। कहमुकरणी में श्लोकारक परिभाषाएँ होती हैं और अन्त की अन्तिम पंक्ति में उसके दोहों अर्थ स्पष्ट हो जाते हैं।

राजस्थानी के समर्थ कवि श्री अन्नसिंह ने कई कहमुकरणियाँ लिखकर 'अमीर खुसरो' की विरासत को प्रतिष्ठा दी है। खुसरो के बाद अन्नसिंह ही पहले कवि हैं जिन्होंने काफ़ी अधिक और अच्छे कहमुकरणियाँ लिखी हैं। श्री अन्नसिंह का एक उदाहरण देखिये—

जाण अजमी को बड़ भाई  
सारी रात जीव भरमाई  
पो फाटपां अर सुटे फर  
क्यूं सजि साजन ? ना सजि अर ।

श्री मोहनलाल पुरोहित द्वारा रचित कुछ कहमुकरणियाँ भी मिली हैं,  
यथा —

हाट बाट कर राज दुबारे,  
भादर पाई कारज सारे  
करी कक नहि मैण घोट  
क्यूं सजि साजन ? ना सजि सोट ॥

राजस्थानी-साहित्य में पैरोडियाँ भी लिखी गई हैं। श्री गुरमीपर व्यास

पैरोबी बिलने में सिद्धहस्त है। वे इसे 'बीब' नाम से पुकारते हैं। बी ब्याध की एक पैरोबी प्रस्तुत है—

बूढ़ रोग-बध बड़ भग हीना-धैर्य बधिर ओधी बधिरीना ।  
ऐसे हूँ पति कर किम सतमाता तारि बनावत बरहि मसामा ॥

'साहब तुम ही क्याम हो तुम लगि मेरी बीड़ ।  
बूढ़ा माके हूँ बक' बस्तर में रो ठोड़ ॥

बी बड़ीप्रसाद साँकरिया द्वारा रचित पैराडिमा भी देखने को मिली है, उदाहरण प्रस्तुत है—

'एक बड़ी घाबी बड़ी घाबी सू पुनि बाब ।  
बाढ़ ठोस्यां बन चुके कटे कोटि घपरान ॥  
राम बसाया सो बम्पा बल्कर बम्पा ग कोम ।  
बल्कर वो फामा बबी, राल प्रस्र में होय ॥

घरब सिलोका अर्थात् अन्नुर-पूर । इस प्रयोग का मुभाधार एक कहान्त होती है। कहान्त को बरिठान करनेवासे प्रसङ्ग की कल्पना करके उसके स्पष्टीकरण के लिये पद्य की रचना भी जाती है और अन्त में वह कहान्त से भी जाती है। श्री मनोहर शर्मा द्वारा 'घरब सिलोका' के सम्भवतः दो अर्थक बररा के अङ्गों में प्रकाशित किये गये हैं—

'एक बीड़ुं माय से बीयो रालू नाह कपनी बीयो ।  
घबारी उठके नूठे गांव बोबी बिड़ी-कपूरी गांव ॥  
एक तिम माह सु कायो रालू नाह बसायो बासो ।  
के से कुनड़ा उलदयो गांव बोबी बिड़ी कपूरी गांव ॥'

### काव्यानुवाद

उत्कृष्ट रचनाओं के काव्यानुवाद भी आधुनिक राजस्थानी-काव्य में मिलते हैं। श्रीमद् भागवतद् गीता, महाकवि कामिदास के मन्वन्त व रघुबन्ध उमर बीराम की स्वाइबी रबीन्द्र की गीतावलि दुर्गासप्तसती हाल की पाषा-सप्तसती और मर्तुहरि के तीनों अर्थकों के राजस्थानी काव्यानुवादों में राजस्थानी के पाठकों के लिये विश्व-साहित्य का नवनीत प्रस्तुत किया है और जिससे राजस्थानी भाषा की सामर्थ्य का भी परिचय मिलता है।

प्राचीनक स्थिति में गीता के अनुवादों की परम्परा मिलती है, जिसमें स्व० श्रीरामकर्म घाघोपा और महाराजा जयचंद्र के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

शासोपाजी ने मद्य में भीर महाराज चतुरसिंह ने पद्य में पीता का अनुवाद किया।

राजस्थानी में सर्वाधिक अनुवाद यीमव् भागवद्वीता के ही हुए हैं। फु फुनू के श्री विश्वनाथ शर्मा 'विमलेष' ने श्री पीता का राजस्थानी पद्यानुवाद हाल ही में प्रस्तुत किया है। जिसका एक उदाहरण प्रस्तुत है—

सरसी, परमी मुख-मुख देबाना इन्द्रप्रा बिचयां रो बोग ।  
 क्षिणु में ही मिटवाना धनुं न बाने सेले मद्य कर सोग ।  
 धनु न बोही पीरक हासो जो बुक सुक में गिपी समान ।  
 बीने जिसे सताने कोमी बोही पावे मोकस महान् ॥

श्री नारायणसिंह भाटी मनोहर शर्मा मनोहर प्रभाकर और मांगीसाल चतुर्वेदी ने 'मिथुन' के अनुवाद किये हैं। अनुबाहित पद्यांशों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१ "बीजल कम कामली भक्तक इन्द्रपनस सा चित्र सुरङ्ग ।  
 गाव कम मुभी मनजाबा जान हेठ गम्भीर मुखङ्ग ॥  
 निरमल नीर सरीसी घाना, रतन बई धामण छाई ।  
 तेरी होइ करै री बावा डेबा म्हेस धामताई ॥'  
 (मनोहर शर्मा)

२ "बामख ज्यु बम-दम बमके ई शिवडे बाब करेती बाम ।  
 मन्धिर गाव सु मिरदङ्ग बाने सुरजन सा छाड़े चितराम ॥  
 ऊजल बल सा रतन धामखा डेबे म्हेस लुवे धाकाठ ।  
 तोसु होइ लवावे पूरी धनका यो म्हागे चिसबास ॥  
 (मनोहर प्रभाकर)

३ 'परली पोबी लेक नीद सुक साप्रत नेती ।  
 पङ्क उड़ीको भिच मुबंती बण धरुपेती ॥  
 हरबी मोटे मोब बापड़ी कंय भरती ।  
 बिसझाने मद्य मेघ सपप्रां घेण मिलती ॥''

(नारायणसिंह भाटी)

श्री मनोहर शर्मा और प्रमद देवावत ने उमर लैयाम की विश्व प्रतिष्ठ उदाहरणों के अनुवाद किये हैं। श्री कृष्णपोषाम कस्ता ने कालिदास के चतुसंहार का अनुवाद किया है। श्री बन्धुसिंह ने हाल की 'पापा सप्यघटी' और कालिदास के 'रमुबंग' का अनुवाद किया है। धरिदवान कविया ने 'दुर्गा सप्यघटी' का और श्रीबसुराम ने 'चतु रसोकी' के अनुवाद किये हैं।

रामनाथ व्यास 'परिकर' और नारायणदास भीमानी ने रवीन्द्र की बीताञ्जलि के गीतों का राजस्थानी अनुबाद किया है। श्री रामनाथ व्यास 'परिकर' के अनुबाद का उदाहरण देखिये—

हूँ चाबू—तन्ने चाबू तन्नेह हूँ चाबू ।  
 म्हारो मन छबा भाइ बात मुण्ठी  
 रीके । रात दिन जकी बासनाबा री जककर  
 में डोसतों फिक री मिथ्या है—  
 छागी मिथ्या घरे हूँ तो तन्नेह चाबू ।

बिया पठ प्राप री अस्तस में जामखी री बीभती मे मुकायां पले बिमाइ  
 घोर मोमाया रे माँम हूँ तो तन्नेह चाबू । बिया प्राभी छांती ने भय कर नाखी  
 तो ह प्रापर जीव में छांती जाई बियाइ पारो जीव दुकाया ह हूँ तन्ने चाबू ।

श्री पबित्रदान कबिया ने पश्चिमी जगत के प्रसिद्ध कवि 'टामस रे की एसेजी' का अनुबाद किया है जिसका उदाहरण देखिये—

मूल—On some fond-breast the parting soul relies,  
 Some Pious drops the closing eye requires  
 Even from the tomb the voice of nature cries,  
 Even in our ashes live their wanted fire.

अनुबाद—अन्त छर्म में जीव मोह सिगरत री जाई ।  
 मीथ्या पैछां माप भ म प प्रांमू भाई ॥  
 सपछाखी में पूय प्रकृति माह पुकारे ।  
 राखी बानी पास बखाला रे बीता री ॥

श्रीलाल नरमल बोधी ने 'मृसिह विरिस्तोत्र' और टेनीसन की प्रसिद्ध कविता 'ईनक प्रारडन' के राजस्थानी काव्यानुबाद किये हैं।

श्री मनोहर प्रजाकर ने भर्तृहरि के तीनों शतक—'शुभार-शतक' 'नीतिसतक' और 'वीरप्य-शतक' के राजस्थानी पद्यानुबाद किये हैं।

श्री मनोहर शर्मा की निम्न पुस्तकें अनुबादित काव्य की ही श्रेणी में आती हैं—

१ राजस्थानी महाबीर-बाणी २ राजस्थानी बुढ़-बाणी ३ राजस्थानी वीरप्य-नीता ४ राजस्थानी अम्योक्ति-शतक ।

श्री मोहनलाल शर्मा 'ममङ्क' ने भी वीता का राजस्थानी अनुबाद किया है। प्रसङ्गवश जस्ताजनीय है कि प्रो० नरोत्तमदास स्वामी ने भी अन्नेरचन्द मेवाणी की कई सुबराठी रचनाओं का और किशोरकल्याण काठ ने 'एस्टन केबल' की कहानी (अन्बारे) का अनुबाद किया है।

श्री कृष्णगोपाल कस्मा ने कासिबास के शत्रुसंहार का राजस्थानी  
 रघानुबाद किया है, जिसका उदाहरण प्रस्तुत है—

“मीठी मांमल रात चंदरमा लखी ब्यावली ।  
 बाबर छीसर बिकसा कुम्ब फुहार तावली ॥  
 मोठी मुकताहार, मणी ठाबोल सावली ।  
 बमल चरबा इण कठ मिनसां मनां भावली ॥”

‘राजमती काम्ब’ के एक अंश का राजस्थानी मापांतर भी ‘मक-बाली’  
 देखने को मिलता है। मापांतरकार श्री बीकठसिंह लोड़ा हैं उदाहरण प्रस्तुत

“बण मह बाण मस सु सीबी छोड़ यमो बण मह बु भासी ।  
 हंसु—बमोड़ा सेठें या रे, केड़ी मठ उपजी कुबदपासी ॥  
 कल बैलड़ी फूस्योड़ा रे, फुस मबोड़ा भूस्योड़ा रे ।  
 मधुरामा फल भूकबोड़ा रे, मुक्कियोड़ी रे आसी आसी ॥”





## गद्य-साहित्य

राजस्थानी का प्राचीन गद्य-साहित्य अत्यधिक विघाम और महत्वपूर्ण है। राजस्थानी में जितना प्राचीन गद्य-साहित्य मिलता है उतना भारत की किसी अन्य भाषा में मिलना कठिन है। विद्वानों की मान्यता है कि १४ वीं सदी तक राजस्थानी गद्य प्राप्य होता है। मुहम्मदगंजी की सभी राजस्थानी के पाठकों का अमान तथा प्रचार-प्रसार की अन्य सुविधाएँ न मिल पाने के कारण इस भाषा का अभी बहुत कम साहित्य प्रकाश में आ पाया है। राजस्थानी गद्य-साहित्य को ३ प्रमुख भागों में विभक्त किया जा सकता है।<sup>१</sup>

- १ धार्मिक गद्य-साहित्य (अ) जैन (ब) पौराणिक।
- २ ऐतिहासिक गद्य-साहित्य (अ) जैन (ब) जैनेतर।
- ३ कथारमक गद्य-साहित्य।
- ४ वैज्ञानिक गद्य-साहित्य।
- ५ प्रकीर्णक गद्य-साहित्य (क) पञ्चरमक (ख) अमिलेयीय।

राजस्थानी साहित्य परम्परा को समझने के लिए सामान्यतः उसे तीन कालों में विभाजित किया जाता है—

१ प्राचीनकाल	सं० ११०० से सं० १६००
२ मध्यकाल	सं० १६०० से सं० १९००
३ धातुनिक-काल	सं० १९०० से आज तक।

वर्षों 'मजस' सं० ११०० से सं० १४०० तक की प्रवास काल और सं० १४०० से सं० १६०० तक की विकास काल मानते हैं। विकास काल राजस्थानी गद्य का स्वर्णकाल है। १० वर्षों के इस समय में गद्य शैली के कई नये प्रयोग हुए अन्य योजना की उपरोक्त सभी उत्पत्त्या भाषा में यदि पकड़ी। मौखिक धर्मों के साथ व्याकरण प्रत्य भी लिखे गये। ऐतिहासिक गद्य भी सामने आता तथा भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित हुई।

विकास काल के उपरान्त गद्य-साहित्य स्थिति पड़ गया जिसका पुनरुत्थान धातुनिक-काल या नव-व्यापारण-काल में ही हुआ।

१ राजस्थानी गद्य-साहित्य का विकास—डॉ० विमलचन्द्र वर्मा 'मजस'।

हिन्दी के बीर-गाथा-काल में साहित्यिक क्रियाशीलता का केन्द्र प्रबानत राजस्थान ही था। पद्य के साथ-साथ इस समय पद्य भी विपुल भाषा में रचा गया, का प्राबल्य उपलब्ध नहीं है।

गद्य १२ वीं १३ वीं और १४ वीं शताब्दी में भी कई जैन साधुओं ने निबन्ध वर्ण सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों की रचना की थी जिनमें से कुछ गद्य के हैं और प्रतिक्रिया पद्य के। पद्य रचनाएँ प्रायः मौखिक रखा करती थीं लेकिन पद्य रचनाएँ लिखित हैं, जिनके उदाहरण प्रायः भी देखने को मिल जाते हैं। इनकी भाषा पर अल्प अक्षर का स्पष्ट प्रभाव है, जिनमें हमें निश्चित रूप से राजस्थानी के प्राचीन पद्य का नमूना मिलता है। इन तीन शताब्दियों में राजस्थानी गद्य का महत्वपूर्ण अङ्ग जैन धर्म सम्बन्धी रचनाएँ ही हैं।<sup>१</sup>

स्व० श्री मोहनदास विप्रबुजाल पंढर्या ने ऐसे कई पद्य-रचने प्रकाशित कराये हैं, जिनमें राजस्थानी के प्राचीनतम उपलब्ध पद्य के नमूने मिलते हैं।

१६ वीं शताब्दी की 'अम्बर कुँवर की बात' १७ वीं शताब्दी की 'राज रतन महेश वासोदय की बचनिका' 'वैदिकविद्युत स्कमली की टीका' और 'सुखलोक नैणसी की कथा' तथा १८ वीं शताब्दी की 'जीमावती भाषा' 'डोका मारवली की बात', 'बैशाख पचीली' 'राजा रिसासू की बात' 'बीजा सोरठ की बात', तथा 'अचमसिंह बीबी की बात' आदि तत्कालीन प्रतिनिधि राजस्थानी गद्य के अनेक उदाहरण हैं।<sup>२</sup>

डा० टंडन ने 'रघुबर बंस प्रकाश' और 'धानम्बर बुनम्बर माटक' में भी कहीं-कहीं तत्कालीन राजस्थानी गद्य के नमूने प्राप्त होने की बर्णना की है।

हिन्दुस्तान (भाग ५ अङ्क ३) में उमीसवी शताब्दी के गद्य के दो नमूने प्राप्त होते हैं—

१ 'जिण्ड बिसामें बराबी रहे सो बिसो इतिहास कहाने। जिण्ड बिसामें कम बराबी सो बात कहाने। इतिहास रो अक्षय प्रसङ्ग कहाने। जिण्ड बात में एक प्रसङ्ग हो अमत्कारिक होय तिका बात बास्तान कहाने।

(सन् १८०३ के लगभग)

२ 'सं० १८८५ बैशाख सुख ५ वीं महाराज रतनसिंहजी वसत विराजिया करण म्हीन में। मु पहाती तो गाँव संबर से मोवारे तिलक बिन्दा थी हुकुर री। बा पीछे महाराज रा ठाकरा बैरीसालजी वेरसबात हुकुर री तिलक किया। बीये राजसर रा ठाकरा महारसिंहजी तिलक किमो। (सन् १८९१)

१ हिन्दी साहित्य कुछ विचार—डॉ० प्रेमनारायण टंडन पृष्ठ २१७।

२ राजस्थानी गद्य—डॉ० प्रेमनारायण टंडन।

महाकवि सूर्यमल्ल के कई पत्रों से उनकी राजनीतिक चेतना और कर्तव्य परामर्श का परिचय मिलता है। साथ ही तत्कालीन भाषा और अभिव्यक्ति की भी जानकारी मिलती है। और सतसई के संपादकीय में ऐसे कई पत्रों का सम्मेलन किया गया है—

१ 'धीर राम्य ने घठी की सखर के' बान्तु मिली सो परमेस्वर की हुपा गो घठे तो बनचार ही छै । आसाइ में नामा की कौच हुजार बीस क घासरे भाई छी सो घठासो तो टलि गई तो मेबाइ तक होई पासी जावां भासां री छाबखी कूटि साहाबाव की काड़ी में पुची छै । (सं १९१४)

२ 'घारवा तथा घाममरा सों प्रपेज को कई कसूर बलि घामो सो बी साबिक बस्तूर लिताबसी धीर राजसिंह के साथ पत्र गयो तीमें अर्म के निमित्त पुमुस्ता को प्रकन लिखयो छै ठीको भी प्रत्युत्तर लिखायो नहीं सो अब क्या-क्या की बसी-बसी तरह दीसती होय सो लिखादसी । (सं १९१५)

अभीसबी घाताम्बी के अन्त धीर बीसबी घाताम्बी के धारम्म में रच 'पञ्चाख्यात' नामक एक धीर ग्रन्थ का परिचय मिलता है। यह पञ्चतन्त्र का राजस्थानी पद्य में अनुबाद है—

एक मांघ में रास मडवा लागो । बाबम बिघाई । आतर बजाई । तर मरैया ने तस घामी तर मांघ का छोप ने पूछे । घरे बाबका । पासी री पुपत बतायो । तब छोटी कीयो । ऊ झुका भाबा र क हरे । तब मरखयो कूड़े पयो ।

इस ग्रन्थ के अनुसार धारम्म में राजस्थानी का सम्बन्ध काड़ी बोली से अधिक वा ब्रजभाषा से कम । धीरे-धीरे ज्यो-ज्यो ब्रजभाषा का श्रेष्ठ बढ़ता गया त्यों-त्यों उसका सम्बन्ध भी ब्रजभाषा से कमिष्ठ होता गया । यही तक कि टीठि-गुण में आते-आते राजस्थानी के किया धीर सर्वनाम के अधिकार रूप ब्रजभाषा के समान ही हो गये—परन्तु साव-साध कुछ ऐसे ग्रन्थ भी रहे जिनमें ब्रजभाषा का कुछ राजस्थानी है और जो भाषा सीली की दृष्टि से बहुत महत्त्व के हैं । आगे चलकर काड़ी बोली का विस्तार श्रेष्ठ बढ़ते चले जाने के कारण राजस्थानी भाषा का हिन्दी भाषी प्रांतों में विशेष प्रचार न हो सका ।

अभीसबी घाताम्बी में कई वर्षों तक राजस्थानी में भी राजस्थानी कथ नहीं लिखा गया काव्य रचनाओं की परम्परा रही अवश्य लेकिन वह भी क्षेत्रीय महत्त्व से प्राये नहीं बढ़ सकी ।

इस प्रकार ११वीं घाताम्बी के पूर्वार्द्ध से अग्रप्रथम से पूर्व हीकर, राजस्थानी में एक स्वतन्त्र भाषा के रूप में जो विकास पाया वह अल्प धीरे-धीरे प्रसार-श्रेष्ठ की छोटी से छोटी सीमाओं में भी बचता चला गया ।

पश्चिमी घोर लड़ी बोली के विकास में राजस्थानी-मध्य के विकास की धारा को कुच्छित तो किया लेकिन यह प्रवाह पूर्णतः विलुप्त कभी नहीं हुआ और स्व० रामकृष्ण घासोपा के समय से उसमें पुनः नयी सामर्थ्य प्राप्त कगी। लड़ी बोली के विकास में जो स्मारक महावीरप्रसाद द्विवेदी का है, राजस्थानी के विकास में भी रामकृष्ण घासोपा उसी क्षेत्र के धर्मिकाटी हैं। राजस्थानी भाषा के विकास और उसकी पुनर्निष्ठा के लिए घासोपाजी की सेवाओं को कभी नहीं भुलाया जा सकता।

श्री सिद्धचन्द्र मण्डिता राजस्थानी के नव-आमरस्य काल के मसब हैं। धातुनिक राजस्थानी कथा-साहित्य और नाटक-साहित्य में पहले प्रयोग मण्डिताजी के ही मिलते हैं जिनकी कर्मा धर्म्यन की गई है।

बीकानेर के श्री धर्मरचन्द्र नाहटा और मौरसाल नाहटा राजस्थानी-साहित्य की प्रभुर सामग्री प्रकाश में लाये हैं। श्री धर्मरचन्द्र नाहटा ने साहित्यिक शोध विषयक कई निबन्ध राजस्थानी में लिखे हैं। श्री मौरसाल नाहटा ने सरस और सरस राजस्थानी में कई लघु-कथाएँ भी लिखी हैं।

श्री मुरलीधर व्यास की कहानियों में धातुनिक मध्य का सौष्ठव मिलता है। व्यासजी की चित्कार्पक और फड़कती हुई शैली में राजस्थानी का शौर्य निखरा है। उनकी नयी भाषा-व्यवना के भाषा की सामर्थ्य का बढ़ावा है।

राजी सखीकुमारजी नू शकट ने काफी परिमाण में राजस्थानी-मध्य प्रस्तुत किया है। लोक-भाषाओं और ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित धातुनिक कई कहानियों में लोकभाव की सरस राजस्थानी मिलती है। राजस्थानी भाषा की प्रबल हिमायती इत लेखिका ने सरस और प्राज्ञ धर्मव्यक्ति में विचारों को सुस्पष्टनिबन्ध भाषा का रूप दिया है। उनकी 'मांभल घट' 'हूँकारो घो सा, लड़ लैबा-लैबा लड़ा' 'कैर चकवा बाठ' आदि कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्री० मण्डितामहाशय स्वामी राजस्थानी-मध्य की महान परम्परा के प्रसारकों में से हैं। उन्हें देवी भाषाओं के धर्म-प्रत्यय और मस-मस की जानकारी है। वह राजस्थानी-मध्य के श्रेष्ठ लेखकों में से हैं।

'राजस्थान भाषा' के सम्पादक श्री बन्नीप्रसाद सांकरिया की भाषा प्रवाहमयी और धीज-मुल प्रमाण है।

सर्वथी डॉ० कन्हैयालाल बहल लालूचम संस्कृत भीसास बचनल बोधी मनोहर धर्म लीलापतिइ रोबाधत किशोरकल्पना काल, राजठ सारसवत,

कीमल चौधरी बन्धसिंह और रूपचन्द्रम चौकरिया आदि कई लेखक राजस्थानी गद्य-साहित्य में निरन्तर बुद्धि कर रहे हैं।

प्रागुनिक काल के गद्य लेखकों की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है—

१ 'भाषा की मुख्य श्रुति या है कि भाषा मातृभाषा वाली हुबली तो किसी मातृभाषा भाषा मारवाड़ी है इसी दूसरी एक पण नहीं है, परन्तु इस भाषा की व्याकरण और किताबा न हुबला न इण्टी श्रुतिवा की राज में छोटियोका समार वाली रचा है। अतएव सोच इठ भाषा ने कुछ मान नहीं समझे है, और कठे ई भाषा सम्बन्धी बात बने तो मारवाड़ी भाषा की बड़ी निम्ना करे है।

—रामकृष्ण घाघाणा

२ 'मारवाड़ी माई बली कविता छै, मारवाड़ी माई बला तरकारी रूपर छै, मारवाड़ी माई महाकला का बला रचनाका खाता छै मारवाड़ी माई बली पत्र व्यवहार छै, और मारवाड़ी माई राजकीय सामाजिक और व्यवहारिक घणा लेख छै। प्रायणी मातृभाषा ने हीन समझैल नू प्रायणो उच्चार किये तरह हो सके ?

—सिद्धचन्द्र भरतिया

३ 'राजस्थानी भाषा में साहित्य तो नूब रच्यो गयो पण हास ठाई छ्यो बहोठ ही कम है। बगी बगी लोकां कनी घर बोनी भय्भारी में हुबाक हायरी लिख्योकी पोष्यां पकी है। प्रायकन पुणणी रचनाका रे पढलै रा सीक घोषो होय रह्यो है।

—अनवरत्न नाहटा

४ 'एक स्मार्तिवा की बात बोली। सुण' रे राजम की मुहते की ने बुनार पूछयो—'अ-सुण कूके ? मुहते की कयो—'अम्भावा ऐ स्मार्तिवा कूके। राजकी कया—'ऐ कठे रने ? मुहते की—'अम्भावा अवन में रने'

—अनवरत्न नाहटा

५ 'सीक रे बगठ सुरख भयभान प्रायरी किरणोकर बरे पधारिया। प्राचा बिब डाली डाली फरक नाच' र पञ्ची परां छाप्पी मु डा क्रीया। सुरख की किरणो नू बुनेरी रच्योकी पांवां पसारवां लीला घामा रे नीचे उठरिया। नू छाप्पा में नू छोटा छोटा मु डा काडपां बन्धा पांवां रे प्रायरी नू नू कण्ठा बाट नूना रिया।

—रानी सरमी कुमारी नूबडावठ

६ 'म्हाये तो बड़ विस्वास है के प्राचीन भाषा बाँ में जितो घो साहित्य धन राजस्थानी रे बगडार में भरियो पकियो है उतो कवाच हीं' व कोई नूनी प्राचीन भाषा रे बजाने में देखल में प्रायेला।'

—बडीप्रसाद चौकरिया

७ 'कोरिये बड़े रो पाणी मां । जीम सूके'—रामू बोल्पो । रामू-किसने  
 जाती रो बेटो । मा रो जाइसर । बर रो जानलो । सापी संयसिया रे मन  
 लागतो । उमर कोई पन्धरा सोना लाम । गाँव में फूटरी में पिण्डिनी । गोरो  
 छड़सड़ीमो । बड़ी बड़ी धौली—प्राय तीन दिन सू सुनपाठ में : —'बन्धसिंह

८ म्हारी मा मान्यता है क राजस्वानी रे पुनर्निर्माण रा साम्वात्म  
 गुणन करण साक राजस्वानी रचनाएँ ने लोकप्रिय बलाबली चाही है ।  
 पर रचनाएँ लोकप्रिय बर ही बल सके जब आम धादमी री समझ में  
 आयल ओगी भासा में है सिद्धी बाई । —उपगत सारस्वत

९ 'रीति रन्यां रे कुछ निश्चित नियमों री कसौटी पर धारोचना करलै  
 री श्रेक पद्धति है जिसने निर्लंकारमक धारोचना प्रणाली कही जा सके ।'  
 डा० कन्हैयालाल सहन

१० हिन्रुस्ताव रे माँय बिसायवाँ रा बाणिया धाया । बिस्ती रा  
 पाठसाह बहादुरसाह ने बेर कीधो । फलौं रा बेहूँ डीकरों ने बाणिया । बिस्ती  
 रो बेहवास कीधो । बाइसाह ने रमून बकड़ री माँय बीठासिमाँ बठे गो  
 धापरी बटठी रा बिन पूरा कीधा । बठे बच फराँसी पूर्ववाली फिरमी धाय  
 नै धापरो बड़ो माँय कीधो । —सोबाम्बसिंह रोखाबत

११ राजस्वाम रा बेड़ करोड़ बासी बिकाँ में समता धरुणगढ़ गई,  
 पढया सिक्या डाक्टर, इन्जनिपर-बकील मास्टर-बाबू श्रीर प्राध्या प्राध्या  
 धीमाँ माये बिराजमाम । पण उरौं री मामड़ भासा राजस्वानी रो काँई  
 हाल है ।' —धीलाक मयमम ओधी

१२ 'दिवासी री रात नै नाँवाँ रा बालक मेमा ह्यो ब्याक' मेर बककर  
 लपारं के एक डंडे रे माँके पर सोहू री तार लगा सेवे भर उण तार रे  
 कपड़ो लपेट लेवे । उण मायं 'बिखबोपरो' पिरोय लेवे । इस पर सेल मेर  
 कर रोसनी कर—ई सीठी रो नाव 'हीड़ा' है । —मनोहर रानी

१३ 'मेक सिख में उण रे मन में घिस्यो बितराम मंडम्यो बिको  
 माँबानी कीठपाँ में रैबण हासी सयणी कुगामी ने बितरो डरा लेवे । एक  
 चोर छाने छाने रयोपी में बड़े बठे सू मो मोमे बीमण हासी कमरे में  
 धाई-----, मारिबा रा पत्र धूजल लाग्या भर उण रे समने सरीर  
 में श्रेक बुजलीं सी क फूटयो । —बिधोर कल्पना काँठ

राजस्वानी गद्य के सम्बन्ध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रन्थ भाषा की एक  
 रूपता का है । राजस्वानी भाषा के अस्तित्व और उसके पुन स्वरूप के

सम्बन्ध में आज भी राजस्थानी के विद्वानों में काफ़ी मतभेद मिलते हैं। कुछ विद्वान महानुभाव भाषा को क्षेत्रीय संकुचितताओं में बाँधने का प्रयत्न करते हैं जो भाषा के विकास के लिए बाधक सिद्ध हो रहा है।

इस विषयता का एक प्रमुख कारण यह है कि राजस्थान की एक राजनैतिक इकाई में बाँधने से पूर्व यहाँ के विभिन्न राजवाड़ों ने अपने राज्य कार्य में राजस्थानी के क्षेत्रीय स्वस्वों को ही धीमीकार किया। राजवाड़ों के अनेक पट्टे परवाणों के तुलनात्मक सम्बन्ध से पता चलता है कि एक राजवाड़े और दूसरे राजवाड़े की भाषा में मूलतः समानता होती हुए भी साधारण अन्तर अवश्य मिलता है। यह अन्तर वस्तुतः बोली का है भाषा का नहीं। भाषा का कोई साहित्यिक रूप बन सके इस ओर किसी का ध्यान था भी नहीं।

यह काम राजस्थानी भाषा के विद्वानों और बंधाकरणों का है कि वे राजस्थानी साहित्य की पूर्ण परम्परा में उस भाषा के वास्तविक स्वस्व के रचन करे और वहीं से अपनी एकीकृत भाषा सम्बन्धी भाष्यता स्थापित करें।

राजस्थान के एक संगठन में बंध जाने के पश्चात् प्रायः की साहित्यिक और सांस्कृतिक विभिन्नताएँ स्वतः एकरूप होती जा रही हैं। राजस्थानी में आज जो कुछ सिखा जा रहा है उसे सम्बन्धित बोलियों के प्रभाव के नाम पर विभाजित नहीं किया जा सकता। राजस्थानी में नय-रचना की ओर लेखकों का सहूल्य बढ़ता जा रहा है। उसका भविष्य उज्ज्वल है।



## नाटक—एकाकी

डा० बसुरत घोष ने हिन्दी भाषा की व्यापक धर्य में पहलु करते हुए हिन्दी नाटक की उत्पत्ति १३ वीं शताब्दी से मानी है।<sup>१</sup> उनके इस निष्कर्ष का आधार नय सुकुमार रास' है जिसकी रचना लगभग सं० १९०० में हुई थी। यह रास ग्रन्थ उस समय का है जब प्रपञ्च च और राजस्वामी का संस्कारकाल था। इस नाटक की भाषा प्रपञ्च च मिथिल राजस्वामी है मठ भी गोबर्धन वर्मा इसी को राजस्वामी का प्रथम नाटक मानते हैं।<sup>२</sup>

१७ वीं और १८ वीं शती में ऐसे प्रमाण मिलते हैं जब राजस्वान में 'रास' और स्वाम धर्मिक लोकप्रिय हो गये थे। 'रास' और 'स्वाम' बीच नाट्य के रूप में दृश्य काव्य के ही अन्तर्गत स्वीकार किये जाते हैं।

'स्वाम' और 'रास' नाटकों में जन-भाषाओं का अधिक प्राधान्य या अन्तर्गत लोक-रस को आकर्षित करते थे। प्राप्त जानकारी के अनुसार कुछ विभिन्न रास और स्वामों का परिचय इस प्रकार है—

- (अ) धार्मिक—स्वाम पूरन मत्त मगध को स्वाम मीरा मङ्गल को स्वाम तरसी सुता की स्वाम भयत प्रह्लाद को।
- (आ) पौराणिक—स्वाम नर दमयन्ती को स्वाम राजा बिय उरबसी को स्वाम किसम इकमणी को।
- (इ) प्रेम मूलक—स्वाम बोला मारु को स्वाम राजा अन्ध मसियागिरी को, स्वाम विजय नागवन्ती को स्वाम निहाम दे सुमदान को।
- (ई) ऐतिहासिक—स्वाम राजा अन्धरु को स्वाम रास रिडमल छोड़ी को स्वाम बीरमदे को स्वाम प्रसन्न लौसादे को।
- (उ) बीरपूजा—स्वाम जोहान को स्वाम सरबण कुमार को स्वाम देवाजी को स्वाम पावुजी राठीर को।

१ हिन्दी नाटक सङ्ग्रह और विकास—डा० बसुरत घोष।

२ राजस्वामी नाट्य परम्परा—श्री गोबर्धन वर्मा (साहित्य सङ्घस धर्य १७ अक्टू १ पुष्ठ ९७)।



(ऊ) मनोरंजन—नीटकी सहुजावा की क्यास बुनिया भरियारण के क्यास चार भगिड़ी को ।

(ए) प्रादर्श—क्यास छत् हरिचन्द्र को क्यास राजा भरपरी पिपना को क्यास राजा मोरचन को क्यास राजा बलि को ।

(ऐ) समस्या-मूसक सुबारबाबी—क्यास रिचवठ रानी को क्यास बेटी बैचा को क्यास भगिड़ी भगिड़ी को क्यास चोर बजारी को ।

श्री अमरचन्द्र नाहटा ने लिखा है कि २ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही क्यास चौर उमाओं की इस प्रकृति ने बहुत चौर पकड़ा । अनेक क्यासों में लोकमंच तैयार हुए और अनेक कवियों ने क्यास-संज्ञक रचनाएँ लिखीं । राजस्थान में एक बड़े चौर लेखे गये संज्ञको क्यासों की सूची नाहटाजी ने अमर से प्रकाशित की करवाई है ।

नाहटाजी के अनुसार धार्मिक शैली के नाटक २ वीं शदी के पूर्वार्ध में लिखे जाने शुरू हुए ।<sup>१</sup> उपसङ्ग नाटकों में सर्व प्रथम श्री मयवतीप्रसाद बाबका का 'दृष्ट विवाह नाटक' तथा राजस्थानी क प्रसन्न सेवक स्व० शिवचन्द्र भरतिया के तीन नाटकों १ 'केसर विनाय' २ 'फाटका बांयाल' और ३ बुड़ावा की सपारी के नाम घाटे हैं । सन् १९१५ में प्रकाशित भरतियाजी के तीनों नाटक खूब लोकप्रिय हुए ।

जानगांव के श्री मधुच्छास मट्ट ने अपने नाटक 'रम्बारमण' (प्रकाशित सन् १९२ ) की प्रस्तावना में श्री अपना यह मत व्यक्त किया है कि नारबाड़ी बापा के अमर सेवक या अल्पकार, मेरी नजर में ता इन्धोर विवाही श्री भरतियाजी हुए हैं । श्री मट्ट के इस नाटक में १९ प्रकरण हैं । अपने इसे 'नवलकथा' भी कहा है ।

तत्पश्चात् श्री नारायण प्रहवाल के 'विद्यालय (प्रकाशित सन् १९२२) और 'कमजुगी कृष्ण इमण नाटक' का उत्सेह धारक है । श्री अयवाल द्वारा लिखित कई नाटका का हवाला भी श्री अमरचन्द्र नाहटा ने दिया है यथा—  
१ महाभारत का श्री गदोस २ अकल बड़ी क भैल ३ भाग्योदय ४ दानवर्म ५ सनाय सेवक महम ६ महाराणा प्रताप और ७ सरस्वती विजय ।

बराद के श्री विश्वनाथजी विवाही द्वारा लिखित दो नाटक भी प्रकाशित

---

१ राजस्थानी भाषा के ९० नाटक और ३ उपन्यास—( कल्पना, मार्च ३८ )

इस दिनके नाम 'बिजयावामी' और 'बाल रामायण' है। यह नाटक राजस्थानी (मारवाड़ी) में लिखे गये।

इसी वर्ष में श्री गुलाबचन्द नायीरी द्वारा लिखी कई छोटी-छोटी पुस्तकें (मुंगायों की सभा मीरों घाड़णो, बेटी की बिक्री-बहु की खरीदी मोट्यां की माता मारवाड़ी पपड़ी और मुंगायों की साज) की चर्चा परमावश्यक है। श्री नायीरी और भी भद्रबात ने नाटक रचना के क्षेत्र में सक्रिय योगदान देकर राजस्थानी के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण योग दिया है।

श्री गुलाबचन्द नायीरी के 'मारवाड़ी मोसर' और नारायणदास के 'बाल व्यास की फास' में सामाजिक संघर्ष की दिलचस्प भूमिकाएँ हैं।

पं० ठाकुरदास चर्मा ने 'पंचायत रो वायस्कोप शीर्षक से पंचायती न्याय और पंचों के विवेक पर विनोदपूर्ण रचना की है।

श्री मधुरदास भट्ट ने 'कर्मों का परिणाम' में लिखा है कि कर्मकार का शूद्र किस प्रकार होपरी के नीचे की तरह बढ़ता है और कर्मों से छुटकारा पाना मोल प्राप्ति संकम दुःख सिद्धि नहीं। श्री चिन्मय ने भी निकल की चौमनी का स्वयंभार' लिखा।

'स्वराज्य वादनी' के रचयिता राज कवि ने कई स्थान बताये हैं यथा—  
१ लौकान मुन्दरी २ पंजाबी खैना ३ खैना तम्बोसन ४ भरपरी खेत ५ मैना बसम रो खैना ६ मूमस महेंदरी रो खैना ७ मकतार सीसा धारि।

'मैना बसम' एक खेप्ट सुधारवादी नाटक है। आपके नाटकों में मनोरजन के साथ-साथ सुधारवादी दृष्टिकोण भी मिसवा है।

श्री रामचन्द्र जम्मड़ ने 'बुद्ध विवाह विदुषण' नामक प्रहसन लिखा और उसे स्वयं प्रकाशित करवाया। श्री जम्मड़ राजस्थानी के प्रबल हिमामतियों में से थे और आप कहा करते थे कि जब भाष्टी की धर्याम्प भारतीय भाषाओं में खेप्ट साहित्य रचा जा सकता है तो राजस्थानी में क्यों नहीं रचा जा सकता?

'गाँव सुधार वा गोमाजाट' नाटक सं० १९१८ में प्रकाशित हुआ। इसके लेखक भीलाब मोरी थे।

सन् १९२८ में प्रकाशित पं० मदनमोहन सिद्ध के सामाजिक नाटक 'जयपुर की खोलाट' का बहुत प्रचार हुआ। इस नाटक में जयपुरी बोली का अधिक प्रभाव है।

विस्मयी शीतकार और राजस्थानी के खेप्ट कवि श्री मछ व्यास ने भी

'मरबल' और 'रङ्गीला राजस्वान' नाटक लिखे हैं। राजस्वान की संस्कृति से भी व्याप्त हो बड़ा लभाव है इसके घटितिकत किस्मी जीवन ही उनका व्यवसाय है, घट घमिनय-कला की दृष्टि से भी उनके नाटकों में बड़ी ज्ञान है।

'कमियुयी कृष्ण इमण नाटक' भी बाममिच बिरचित है जो कबानक से सम्बद्ध बरिषों की घर्वापीन और प्राचीन स्वितियों का तुमतात्मक विवेचन प्रस्तुत करता है।

जबपुर के भी बिरिधारीमान घास्वी का प्रणुबीर प्रताप' मेबाड़ी बोसी से प्रभावित राजस्वानी में लिखा गया नाटक है। घास्वीजी ने 'दुर्गाजी' नामक एक अन्य नाटक भी लिखा है। प्रणुबीर प्रताप' में ऐतिहासिक पात्रों के साथ कुछ काल्पनिक पात्रों को भी मंच पर उतारा गया है। नाटक की प्रस्तावना में ही युगावतार गाँधी का स्मरण करके स्वतंत्रता-प्रेमी महारण्य प्रताप पर नाटक खेलने के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तावना में भाषा-विबाह पर भी बिसचस्य टिप्पणी दी गई है। प्रसङ्ग और बातावरण के प्रतुलन बीच-बीच में काव्य का भी समन्वय है।

श्री डा० ना बि बोधी के 'बागीरबार' में बापीरबार और किसानों की कथा है। यह नाटक राजस्वानी का सर्व-श्रेष्ठ नाटक है। राष्ट्रीय जागरण की भावना इसका बीज-बिन्दु है। इस नाटक की भाषा भाषणी है।

### एकांकी

भाव परिस्थितियों की बदलिता बढ़ गई है। जीवन की बीड़ में निरन्तर मागते हुए समाज के लिये समय का मूस्य बहुत धनिक बढ़ गया है। जब बड़े-बड़े नाटकों और महाकाव्यों को सम्पूर्ण रूप से देखने-पढ़ने का वा चुनने का अवकाश नहीं रहा। सोक-बलि जब बड़े नाटकों के स्नान पर एकाङ्कियों की घोर, बड़े उपन्यासों के स्नान पर लघुकथाओं की घोर तथा महाकाव्यों के स्नान पर मुक्तक कविताओं प्रबवा भीतों की घोर मुड़ी है।

स्व श्री सूर्यकरण पाठीक ने 'सोमावण' एकांकी नाटक के प्रानकवन में व्यस्त जीवन और उसकी बदलिताओं का संकेत करके यह स्पष्ट किया है कि बीच एकाङ्की और लघुकथाओं के विकास में समय की मात्रा का बहुत बड़ा हाव रहा है। साथ राजस्वानी-साहित्य में ही नहीं हिन्दी और अन्य भाषाओं के साहित्य में भी यह परिवर्तन स्पष्ट परिलक्षित होता है।

१ राजस्वानी पद्य साहित्य का विकास—डा० शिवस्वरूप समी 'प्रबल'

ए० पाटीकजी ने पारशात्य नाट्य-शैलियों का प्रकटा अभ्ययन किया था। उन्होंने नए शब्द-काव्य और एकाङ्कियों का प्रचलन देखा और उसी के अनुसार हिन्दी और राजस्थानी की नाट्य रचना को नया मोड़ दिया। नये प्रयोग के रूप में उन्होंने 'बोसावण' एकाङ्की नाटिका लिखी जिसका प्रयोजन रचना में नये प्रयोग के मातृ-साय राजस्थानी जनता का स्वस्व मनोरञ्जन करना भी था।

एकाङ्की की विशेषताओं का सम्बन्ध में भी पाटीक ने लिखा है कि—

परिसीमित व्यापार-केन्द्र होने के कारण वस्तु काम और समय की एकता की रक्षा जिस सरसता से एकाङ्की में होती है, वही बड़े नाटकों में नहीं। अपनी सादगी सरसता और कलापूर्ण सूक्ष्मता के लिये इस प्रकार के एकाङ्की प्राधुनिक साहित्य-मर्मज्ञ समाज को अधिक रुचिप्राप्तक लगते हैं। इसी कारण इन दिनों एकाङ्की नाटक-नाटिकाओं पर सभ्य और मुक्तक कविताओं का साहित्य उन्नत-उत्तर वृद्धि कर रहा है। साहित्य की प्रगति प्रत्येकता से एकता की ओर जटिलता से सरसता की ओर, तथा कौतूहल उत्पत्ति की वृत्ति से स्वाभाविकता के पित्रम की ओर मूक रही है।

प्राकाशवाणी देवसहाय और प्रतीतिक सत्ता (Supernatural Element) के रूप पर जटिलतासी असम्भाव्य जटिलताओं से परिपूर्ण साहित्य को पढ़कर वर्तमान काल का पंडित समाज नाक-भौं सिकोड़ेया परन्तु जहाँ हूबहू मानव-जीवन की वास्तविक सत्यता का प्रदर्शन सौम्य-कसा की रीति से स्पुटित देखेया उसके हृदय की कमी जिसे बिना नहीं रहेगी।

पाटीकजी के 'बोसावण' या प्रतिज्ञावृत्ति एकाङ्की में छोटे-छोटे ९ दृश्य हैं जिनमें देसकाल के निर्येक्षण का बड़ा ध्यान रखा गया है। देस और प्रान्त प्रकृति और वातावरण तथा स्वाभाविकता की दृष्टि से नाटक-रचना में विशेष सतर्कता बरती गई है और उस नाट्य-शैलियों का रूढ़ धारण पहनाकर कहीं भी विकृत नहीं किया गया है। 'बोसावण' में राजस्थान के यथार्थ जीवन का स्वाभाविक चित्रण है। कथा-वस्तु सरस है कथा की प्रात्यरिक भूमि में भोक-वातावरण की स्वाभाविक मूलक मिलती है। स्वान स्वान पर प्रसंगोचित लोक-गीतों का समावेश किया गया है।

प्रस्तुत एकाङ्की जहाँ एक ओर कथा की दृष्टि से राजस्थान के प्रतीक और शीघ्र और प्रतिज्ञा-यामन का चित्र प्रस्तुत करता है तो दूसरी ओर प्रतीक जीवन राजस्थानी जीवन की वास्तविकता और स्वाभाविकता का भी प्रतिनिधित्व करता है।

बोसावण बाल-बाल की प्रचलित राजस्थानी अभिव्यक्ति है। पाठीकजी का कहना था कि 'बहु स्वाभाविकता बहु पचार्थता और सामंजस्य—जो हिन्दी में पैदा नहीं होता राजस्थानी में घरमठा से व्यक्त हो जाता है। 'बोसावण पाठीकजी के इसी प्रयत्न का एक अच्छा उदाहरण है।

हिन्दी के प्रमुख कहानीकार भी मोहनसिंह सेंवर ने राजस्थानी में भी एकाङ्की लिखे हैं। 'वीसहाब' राजस्थानी का सामाजिक एकाङ्की है।

सेंवरजी पर अग्रजी से अधिक छीस की नाट्यकला का प्रभाव है। इनके एकाङ्की इसके विषय में अत्यन्त ही गहन और खरित प्रभाव होते हैं। सामुहिक सम्बन्ध के वास्तविक चित्र भ्रष्टाचार प्रचार और दिखावे की विकृतियों को प्रकट कर पाने में सेंवरजी अधिक सफल हैं। 'वीस हाब' बहोज और विनाह पद्धति पर आधारित पचार्थवाची सामाजिक एकाङ्की है।

श्री नारायणबल भीमानी का 'माटी रो काया गो एकाङ्कियों का संग्रह है। यह खरीर माटी की काया है जो एक दिन माटी में मिल जानमा जीवन की सार्थकता इसी में है कि वह महान सङ्गमों की पूर्ति में इस नवंबर जीवन को बीच पर लगावे भीमानीजी का यह एकाङ्की संग्रह मूलतः इसी भावना पर आधारित है।

'श्री एकजिग' महाराणा प्रताप के जीवन से सम्बन्धित एकाङ्की है। यहसाह अकबर एक बार उस स्वाभिमानी सिंह को देखना चाहता है जिसने अनेक भ्रष्टाचारों में लड़कर भी मुगल सत्तनत की अचीनता स्वीकार नहीं की। वह छकीर का बैरा बनाकर प्रताप से मिलता है। प्रताप क्षुधा-पीड़ित परिवार की रोटी छीनकर भी छकीरों की भोगी भरता है। अकबर की दरार में न जाने के अधिष्ठान पर प्रताप निम्न वक्तव्य में प्रकाश डालता है—

'ए तो रोटी ए टुकड़ा मिले एण भुखा भी रेवला पड़े तो कई होवो। मा रो काम है मा रो मारवावा हिमो मारे है मा रो मुमान मा रो हम्मत हीका कर-कर इ की रई है के मने कुड़ा इण कुर्छो सु मुनतकर मो तो मावाबी रो काम है। धर या टाकर तो वे भी भाव नहीं तो काले काटी रो ठाव परिया। तो पड़े खुमी जो पावाबी रो मुतो मोल अवे सु इव समजण माय बावै।'

'बाकी मैण चौहान पञ्चीगाव से सम्बन्धित है। अफनराव' संभल-सम्राट् राजसेन का प्रसङ्ग है, 'अबसो' राजीव बीर दुमरास और अचीतसिंह के राव्य-रोहस की कथा है। 'नाकण' 'विरामण रो परठिया' मुषी रूप 'नतवड़ी' धारि एकाङ्की भी ऐतिहासिक कथानक है।

नाथपण्डित श्रीमाली ने राजस्थानी में ऐतिहासिक एकांकी की रचना के क्षेत्र को समृद्ध किया है। उन्होंने राजस्थानी में सपथम बानीस एकांकी लिखे हैं और धाककम 'बनिरान' नाटक लिख रहे हैं। भापकी भापा का प्रवाह सामान्य निरंतर राजस्थानी को भी प्राण है। भापा वं बोधपुरी पुट है। रेडियो-एकांकी के क्षेत्र में श्रीमालीजी ने कई सुदूर प्रयोग किये हैं।

बीकानेर के मयमानवास गोस्वामी कम से कम उपकरणों वाले एकांकी लिखने के पक्ष में हैं। राजस्थानी रङ्गमंच को अधिकधिक समता प्राप्त हो सके वे इस दृष्टि से एकांकी लिखते हैं। उनका 'वातिदूत' पौराणिक धारम्यम नर-दधयमती का प्रसङ्ग है जिसमें नुठ और वाति की समस्याओं पर प्राकृतिक संदर्भ में प्रकाश डाला गया है। एकांकी में प्राहिता और वाति-प्रधान भारतीय संस्कृति का चित्र है। 'राज जैतरी' उनका लोक-संस्कृति प्रधान एकांकी है।

बीकानेर के श्री घोषाचन्द्र बम्मड़ ने सुभारवासी प्रहसन लिखे हैं, जिनमें सामाजिक विहृतियों का चित्रण किया गया है। भारतीय परम्परा और विवेक-धीनता की कसौटी पर सामाजिक दुर्बलताओं को परखकर श्री बम्मड़ ने सुभारवासी दृष्टिकोण से कई एकांकियों की रचना की है। भापा में बीकानेर की क्षेत्रीय बोली का पुट है। अभिव्यक्ति में शिष्टता और सुदृढ़ का विशेष ध्यान रखा गया है।

बीकानेर क्षेत्र के श्री वैजनाथ पेंडार को प्रामीण-ओवन के विभिन्न पहलुओं की पहली जानकारी है। भापके एकांकी मनोरंजक व शिक्षा-प्रद होते हैं। भापको के विषय रिश्ततपोरी बाल-विकाह, मुठक बोध जैसी सामाजिक समस्याएँ और कुटीतियाँ हैं। 'बय वंवायत राज' 'बावलो घादमी' 'परदा प्रवा' 'घामुपलों का कुचक' शिक्षा से मार्ग भापके कुछ उल्लेखनीय एकांकी हैं। श्री पेंडार स्वयं अभिनेता भी हैं। इनके मनु एकांकिया का अभिनय अधिकतम बीच मिनिट में हो सकता है। श्री पेंडार की माध्यता है कि सरकारी योजनाओं और विकास-कार्यकों का प्रचार भी राजस्थानी एकांकी बाटकों के माध्यम से ही अधिक फलप्रस सिद्ध हो सकता है।

श्री मोतीसिंह राठोड़ ने भी कई एकांकी और प्रहसन लिखे हैं। रामगड़ (पेंडारवाटी) व श्री भजनलाल गुरू ने भी कई अच्छे एकांकी लिखे हैं, जिनमें शिष्ट हास्यरस की प्रधानता है।

श्री० बाकि-दमास मापुर ने काशी संख्या में और विभिन्न प्रकार के एकांकी लिखे हैं। 'सतसङ्गी' इनके घात एकांकियों का संग्रह है। श्री मापुर ने सामाजिक एकांकी अधिक लिखे हैं जिनमें समस्याओं को उठाया गया है

समस्याओं के विविध पहलुओं पर विचार किया गया है और उनके विद्याप्रद निदान खोजने का प्रयत्न भी किया गया है। सुधारकारी दृष्टिकोण और प्रभावोत्पादक सीसी प्रो. माधुर की एकांकी रचना की विशेषताएँ हैं।

'नामची माँ बाप' 'बाम बिमबा' 'ठाकुरसाही की एक झलक' 'दिल्ली हवा' 'बेकारी' 'काला बाजार' 'कर्म का प्रतिपाद' 'रोग प्रसूताएँ और डाक्टर' 'युनिबन का रोग' 'बर्द ब्लास का दिव्य' आदि कई एकांकियों में प्रायः धार्मिक और ग्रामीण राजस्थानी-समाज के यथार्थ चित्र खींचे हैं। कथोप-कथन स्वाभाविक तथा सरल और धार्मिक युगों से युक्त है। ठाकुर, पंचायतें बुधा-सूत रस्म-रिवाज आदि से सम्बन्धित जीवन को प्रो० माधुर ने बड़ी सरलता और सरलता से एकांकियों में चित्रित किया है। उनके नाटक राजस्थानी जीवन की बोलचाल उन्नीरे हैं।

श्री परलपताम डांगी राजस्थानी लोक-मंच से बंधे हुए हैं। उन्होंने कई श्रेष्ठ एकांकी लिखे हैं। श्री डांगी एक कुशल धार्मिक सौक-संज्ञीत और मेहनत समी कुशल हैं। धार्मिक की दृष्टि से भी उनके नाटकों में बड़ी जान है। 'कुबरी आकर' श्री डांगी का एक प्रतिनिधि एकांकी है।

लाइन के श्री धीमन्तकुमार श्याम का 'स्पेशल मॉडिंग' छठ एकांकी नाटकों का संप्रदाय है। श्याम के कई नाटक 'राजस्थानी बीर' 'मन्वाणी' और 'प्रजा-सेवक' में प्रकाशित हो चुके हैं। 'बन और बरती' तथा 'कावेस माँ गण बरगौ' उनके प्रमुख एकांकी हैं। 'बन और बरती' सर्वोत्तम विचार-धारा का संक्षिप्त-नाटक है।

## गीति नाट्य

राजस्थानी के गीति नाट्यकारों में श्री परलपताम श्याम 'उस्ताद' प्रख्यात हैं। उनके गीति नाट्यों में राजस्थान की संस्कृति और जन जीवन का जीता जायता चित्रण मिलता है। उनके गीति नाट्यों में नई किरण का संवेष्ट है। 'बचावणों' उनका प्रत्यक्ष लोक प्रिय गीति नाट्य है जिसका कई प्रमुख मंचों पर सफल धार्मिक हो चुका है। इन संज्ञीत एवं मूल्य नाटिकाओं की कलात्मकता और सीसी सर्वथा नयी है, साथ ही उस्ताद ने इनके कथोपकथन को संजी की मौलिक सौक युगों का परिवेष्ट दिया है। संज्ञीत लोक-नाट्यकारण से अनुप्राणित है लेकिन प्रभावित नहीं उसका अपना पृथक धार्मिक है। उद्घाटन हर्षोस्वाद्य वेतना परवाह, अम और नयी वेतना की किरणें उस्ताद के कर्मों की जान हैं।

बामकवि 'जस्ताव' का लोक-नाट्य-परम्परा में बहू नया योगदान उनकी विमलसख घुबन-सामर्थ्य का उदाहरण है।

माछीम लोक-कला-मण्डल के संघालक श्री देवीलाल शारर ने भी कई मूल्य-नाटिकाएँ और एकाङ्की लिखे हैं।

उत्कृष्ट नाटिकाओं की दिशा में मनोहर शर्मा ने भी प्रगति की है। उनकी कुछ नाटिकाएँ और रूपक प्रकाशित हो चुके हैं।

### गद्य काव्य

गद्य काव्य लिखनेवालों में सर्वप्रथम श्री विजयलाल विमाली का नाम आता है, जिनके कुछ गद्यगीत पंचराज में प्रकाशित हुए थे।

सर्वेजी बगवतिसिंह मुरलीधर श्याम कन्हैयालाल सेठिया और विद्याधर घास्त्री राजस्थानी के कुछसे गद्यकाव्य रचयिता हैं। श्री कन्हैयालाल सेठिया का 'पौखड़िया' नाम से गद्य-काव्य का संग्रह है। इनके गद्य में रोचकता और टीली में प्राञ्जलता है।

श्री विद्याधर घास्त्री का 'नागएान' जो राजस्थानी में छया है गद्य काव्य का एक सुन्दर उदाहरण है।

श्री बगवतिसिंह और श्री मुरलीधर श्याम के कई गद्यगीत 'मल्लाली' में प्रकाशित हुए हैं जो राजस्थानी गद्यकाव्य के प्रतिनिधि उदाहरण हैं।

गद्य काव्य के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१ 'ऊनाळो रे तपती ताबड़ी में तापी बेसुका पर आलता आलता कब पनबस्यो में फाला पड़ ज्यारे घर मुह मुभां मू मुसुसी के जख सने पू थी घाँसी रे सामे बीठे बसन्त रे मार घायो बिघ्न की रहेनी—मख बसन्त रे बहार सुटता घाली घाँसण बासे घुनाले रो ध्यान कियने ही को घारे नी।

—बगवतिसिंह

२ 'मानवी। इमकार रे हब हुषा करे है। घा बपीको पारो है। घा बाठ मानी। भा भपणामत बोड़ी कोनी है। पल इण रे अपन घाले जय रे परोहर है इण बाठ बिरबा परब में पूम घां कर्मियां घर फूतां न घापणु बास मबल मठना। बोड़ो बेतो राय। पूं तो इणारे कोरो सघामो ही है।

—बगवतिसिंह

३ 'बोले में हापी बिचतो देख गोपाल कयो, 'एक बोड़ी में हापी मिसे है। मनेई ने दोनी ?



बाबाजी बोल्या—मू गो है बैटा मू गो होण दे । बार पांच बरसाँ केँ  
फेर गोवास कयी—हाजी बाजार में घाबै है बाबाजी ।

बाबाजी बोल्या—मू यो है बैटा-हासो मेवा । —श्री मुरलीधर व्यास

४ 'सिन्ध्या हुँता ही मिनस उठघो घर बीये रे मूँके भाबे तूळी मेल बी ।  
वीयो बट्ट-बट्ट कर र बोस्यो— बड़ा घारमी इमाँ के करे है ?

मिनस हँसर बोस्यो—घरे तू हो के ? मन्ने घबेरे में सुस्यो ही नौगी ।

—कम्हीनालाल सेठिया

५ 'ठान्नी रे कसुसे माटी रे बड़े ने कयो—बड़ा । बारे में बास्योको पाणी  
ठंडो कियाँ रेईं म्हारे में बास्योको ठाठो कियाँ हुय ग्यावे ? माटी रो बड़ो  
बोस्यो—मै पाणी ने म्हारे बीच में बास्याँ द्यु हूँ—तू घाँठरे राके घो ही  
कारस है ।

—कम्हीनालाल सेठिया

६ 'सिन्ध्या होण धानी ही । बोराँ की रैठ उन्नी होकी ही । घाब में  
घकेसो ईं टीबा के बीच-बीच में सीप कणिका घीर बाँसाँ की बहार देसठो-  
देसठो दूर टाणी बस्यो घायो । में जप-जप टीबा में जूमण घाया कर  
हूँ बरे ईं कोई न कोई उँबो सो टीबो डू ड घर बीं के ऊपर बैठ' र बाक  
कानी प्राकृतिक कृता ने रक्ष्या कर हूँ ।

श्री विद्याधर शारदा

## कहानी

बाठ सरीखी भूठी गई—बाँक सरीखी मीठी गई ।

बाठ में हुँकारो—फौज में गगाछे ॥

बास चालै बास कोच—तांगो चाले घठाच कोच ॥

पाँचों में रात्रि के घबकास के सशों में बुड़ों द्वारा बच्चों के विनोदार्थ  
को कहानियाँ सुनाई जाती है उनकी भूमिका उपरोक्त पंक्तियों से बाँधी जाती  
है । हुँकारा बेगै वाला बूढ़रा व्यक्ति न हो तो बाठ का रङ्ग नहीं बनता घीर  
घनकर विठनी मीठी होती है—बाठ को घतता ही भूठा समझे कहानी के  
प्राचीन स्वरूप के सम्बन्ध में वह मास्यता ठीक उतरती है । एक समय वा बब  
कहानी नबार्थ से बहुत दूर थी ।

भारत की प्रत्येक भाषा में वार्षिक नैतिक घीर उपदेशात्मक कबाएँ भी  
मिलती हैं । पंचतन्त्र घीर ईसप की कहानियाँ रामायण महाभारत घीर  
भायबत तथा जाठक कबाएँ इसके सुन्दर उदाहरण हैं । हमारे पौराणिक  
साहित्य का तो सम्पूर्ण ज्ञान ही बुष्टान्तों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है ।

राजस्थान का प्राचीन कहानी साहित्य अत्यधिक समृद्ध है। क्यात, बाण कथनिका शबाबेत हास-महकास-हमीपत और याद-बाबत मठ-कबार्ए, घी-पीरालिक कबार्ए आदि साहित्य धातुनिक-कबा साहित्य की परम्परा में आता है।

राजस्थान की कहानियों पर प्रमुखतः चार संस्कृतियों का प्रभाव पड़ा— १ ब्राह्मण संस्कृति २ जैन संस्कृति ३ राजपूत संस्कृति और ४ मुस्लिम संस्कृति।<sup>१</sup>

राजस्थान में जो असंख्य कहानियाँ सुनी-सुनाई जाती हैं उन्हें 'बाण' नाम से पुकारा जाता है। बाण साहित्य सदियों तक मौखिक ही रहा। इन्हें लिपि बद्ध करने का प्रयास काफी बाद में किया गया। इन कहानियों को सामान्यतः निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१ ब्रँथ-कबार्ए २ स्त्री जातुर्य की कबार्ए ३ साहस एवं पराक्रम सम्बन्ध कबार्ए ४ भोज और विष्णुसाहित्य सम्बन्धी कबार्ए ५ अद्भुत कबार्ए आदि।

इन कहानियों में प्रमुख-रूप से धारणर्च कुतूहल विज्ञानासा आदि मानसिक मनोवृत्तियों को कुष्ट करने वाले तत्व ही पाये हैं।

धातुनिक-गुण में राजस्थानी भाषा के कुछ साहित्य क्षेत्रों ने जिनकी जगह पुष्कल परिवर्द्ध में की जा रही है अथवा इस भाषा को उचित प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकने का प्रयत्न न किया गया होता तो सम्भवतः प्रायः राजस्थानी भाषा और साहित्य पर शोध करने की धार सोया की कोई विसवसी नहीं रहती। धातुनिक काव्य की तरह साहित्य की अन्य विधाओं पर भी यह तथ्य प्रुठ-प्रुठ लागू होता है कि उन्हें परम्परा से बहुत कुछ पिछा। जो परम्परा का सूत्र छोड़कर भी चिर-नवीन बना रहे—उस साहित्य में बहुत कुछ खोबा और पा जा सकता है।

राजस्थानी कथा साहित्य की यह विशेषता भी रही है कि वह सर्वोत्प्रेरणाधिक रूप से सामान्य जन-जीवन के सुख-दुखों का साधक बना रहा। मति और नीति-काम्य के प्रतिरिक्त काव्य का शेष मन्डार ता बहुत कुछ सामान्य ठाठ से विपक गया या लेकिन बार्ता और अन्ध बध साहित्य के पोषण। वहाँ पु आरुध नहीं थी। बन्धीबनों और साम्याधित कविता की काव्य प्रधासि से भूम उठने और प्रतिधमोविठ-पूरुं साहस की कल्पना-मात्र से अपनी दासिध भावना को संतुष्ट कर लेने वाले प्राथम-शाताओं का कथा का पद्यारमक मा आरुध सुनने का धवकाय भी कहाँ था ?

१ राजस्थानी गद्य साहित्य का विकास—डा० पित्तलकप शर्मा 'अधक'।

राजस्थानी-भाषा में प्रकाशन की समस्या भव्य भाषार्थों की तुलना में अधिक समय तक रही है और यह समस्या आज भी है। राजस्थानी जैसे वैद नागरी-लिपि में ही लिखी जाती है और कुछ सभ्यों में असमानता होने पर भी हिन्दी मुद्रखानकों से ही प्रकाशन की सेवा ली जा सकती है। लेकिन इस प्रयोग की क्रियान्विति में भी काफी समय लग गया। पिछले २-२५ वर्षों का काल ही ऐसा है, जिसमें राजस्थानी कथा साहित्य की मुद्रित पुस्तकें मिलती हैं, जिससे उनके रचनाकारों तथा रचनाओं की धरित का सूत्यान्त किया जा सकता है।

धार्मिक राजस्थानी-काल के भी मुरलीधर व्यास श्री चन्द्रधर और श्री भीमलाल लक्ष्मण जोशी ऐसे कहानीकार हैं जो बहुत वर्षों से कहानियाँ लिखते बने जा रहे हैं।

श्री मुरलीधर व्यास की कहानियों में विशेषता रहती है। हिन्दी कहानी में समयानुसार लिखने भी नये प्रयोग हुए हैं उन्हें राजस्थानी में भागे का अर्थ श्री व्यास को है। राजस्थानी गद्य की व्यापकता और सामर्थ्य को लक्ष्य बन देने में श्री व्यास का भारी योगदान रहा है। लघु कहानियाँ लिखने में वे सिद्धहस्त हैं।

श्री व्यास का 'चर्पाणै' कहानी संग्रह राजस्थानी कथा साहित्य का प्रतिनिधि उदाहरण है जिसमें उनकी २३ कहानियाँ संग्रहीत हैं।

श्री व्यास ने कई सुन्दर 'रेखाचित्र' भी लिखे हैं। रेखाचित्रों की भाषा सरल सुदृशी और प्राण है। एक उदाहरण देखिये—

एक सरदार हो बरस जाबणो घर छोटे खामले-रो तुककस फोटाभोड़ी दाड़ी मूछ सफाबट, कामो रक बिरमी दाईं बाक्याँ धोसा धोरता पूब ताईं बाँट। वो छोटी में छोटी घर बड़ा में बड़ा हो। ई रे खने बड़ा छोटा से बुटियोड़ा रोगा हा।

श्री मुरलीधर व्यास और श्री मोहनलाल पुरोहित ने अपने सम्मिश्रित प्रयास से २५ रेखाचित्रों की रचना की है जिसका प्रकाशन राजस्थान साहित्य प्रकाशनी द्वारा भीम ही किया जा रहा है। प्रस्तुत रेखाचित्रों के विषय भ्रम की पूजा भाईभारा बन्ने गुणों का पावर, त्याग विश्वास भक्तिभावना आदिपल प्रेक्षमाण बूने रीति-रिवाज आदि से सम्बन्धित है। इन रेखाचित्रों में अनुभवी एवं उनके स्ववित्तर्षा के विविध प्रकार बसिये नये हैं।

श्री चन्द्रधर की लघु कहानियाँ बहरी खबरना से घोट-भोप रहती हैं पर कहीं-कहीं वे चिन्तनशील और बड़ी उनके विचार बोधिन हो जाते हैं।

विश्व को गहराई में उनकी दार्शनिकता तो उमरती है लेकिन वे सरसता से घाह नहीं हो पाती ।

सबे की पोखरें न समाई डा० गणपतराय पुरोहित नृसिंहराव पुरोहित किशोरकल्पना कांत रानी लक्ष्मीकुमारी चूड्यावत सावित्रान भासिया कविराव मानसिंह सौभाग्यासिंह चौब्यावत रावत धारस्वत रतनभाऊ वापीन, नात्राराम संस्कर्ता प्रतापनारायण पुणेहित श्रीनाम मिश्र जगदीश भापुर 'कमल' बीतबयान घोडा भगवानरत गोस्वामी कुम्भाराम भाय रामदेव भाषायं चन्द्रसिंह नोरवर्मासिंह मन्नीप्रसाद सांकरिया और बेंबताम रेंवार जैसे कई कहानीकार भाव राजस्थानी कथा साहित्य में निरन्तर वृद्धि कर रहे हैं ।

'लोक कथाओं के मूल समिप्राम' शीर्षक से डा० सहज और मनोहर कर्मा के कई छोम पूर्ण सेख प्रकाशित हुए हैं जिनसे कहानी साहित्य और लोक साहित्य के प्रति उनकी गहरी पैठ का पता चलता है । श्री कर्मा काय कथासहित और बाबालुबाविन कई कथाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं ।

श्री कर्मा की कहानियों में लोक मानस और मानव मनोविज्ञान के विविध बिन्न मिलते हैं । हृदय के धर्तुइन्द्र और मागशी माकनामा के भाव प्रतिभाओं का एक सजीव दर्पण कर्माजी की कहानियों में मिलता है । श्री कर्मा ने कई नयु कथाएँ भी लिखी हैं जिनमें उनकी व्यवस्थित और सरल भाषा, प्राधुनिक सरस शैली और भावनात्मक समिभ्यक्ति का परिचय मिलता है । उनकी समिभ्यक्ति पुष्ट व्यवस्थित भावानुक्रम और सरल है । कम से कम सख्यों में गहरी से गहरी बात कहने की उनकी पट्टी सामर्थ्य है ।

डा० गणपतराय पुरोहित की कहानियों में गरी हृदय के सूक्ष्म भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन मिलता है । आपने मानव मन का अध्ययन किया है और सामाजिक जीवन को प्राम्बोहित करने का साहित्य की रचना भी है । उनकी 'मुजम्मिल' कहानी कविओं और सामाजिक बन्धनों से बकड़ी एक युवती की कथा है । कहानी में मुस्लिम समाज की कुपतिपा और संकीर्णताओं का विवेचन किया गया है ।

बोधपुर के नृसिंहराव पुरोहित एक कुशल कहानीकार हैं । लगभग सन् ४० से आप राजस्थानीमें सुन्दर कहानियाँ लिख रहे हैं । कहानीकार के रूप में आप सन् १९६० में पुरस्कृत भी हो चुके हैं । 'मैं तो सीसा' 'कानूरी माँ', 'सहिषा बरमोचर्म' 'कमल नन्दाई' 'बाबड़ी' 'पुत्र तो काम', भादि उनकी शायील जीवन से सम्बन्धित कहानियाँ हैं । प्रायः जीवन ही उनकी

दिसवस्वी का विषय है। इस अर्थ में वे स्व० मुंशी प्रमचन्द की साम्यता और आत्माओं से प्रभावित समते हैं।

उनकी 'पुत्र रो बाम' कहानी ग्राम्य जीवन का सजीव चित्र प्रस्तुत करती है। उसमें किसानों की यरीबी और मूदबोरी का प्रत्यक्ष चित्रण है। कहानी में बापा का बीजक निस्तार पर है लेकिन अन्त उतना प्रभावोत्पादक नहीं।

कवि की किछोर कल्पना काठ कहानियाँ भी लिखते हैं। उनकी कहानियों में मानव जीवन के उतार चढ़ाव मिलते हैं। पुटन और कसमकस की चर्चा मिलती है। वे बहुत दुःख, आश्चर्य-न्यून हैं। वे समस्या प्रस्तुत करते हैं उसके कारणों की शक्य विवेचना करते हैं और और ठहुपराम्ठ उनका दिदान भी प्रस्तुत करते हैं। यही काठ की कहानियों की विशेषता भी उत्सेवनीय है। वे कल्पना मिश्रित और सचेरनात्मक कहानियाँ भी लिखते हैं।

लोक कथाओं को आधार बनाकर मिलने बामा में मुरसीपर ब्यास के प्रतिरिक्त रानी लक्ष्मीकुमारी बुधशक्त माहनमान पुरोहित जनवीध मानुर 'कमल' आदि उत्सेवनीय है।

रानी लक्ष्मीकुमारीजी राजस्थानी लोक कथाओं को संभारने सजाने तथा उन्हें प्रचारित करने की दिशा में प्रयत्नशील हैं। रानीजी के 'माझमराठ' व अन्य कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जैसे—

१ मुमन २ हुंकारो धा हा ३ लोक कथाएँ ४ टावरों की बाताँ।

'टावरों की बाताँ' नाम साहित्य की पुस्तक है जिसमें सरस और सीधे सारे डग पर कही गई बातों में भी माया के गुहाचरों और बटकीसेपन से से विविष्ट सौम्य धारा है। साबास म्हाटी पूँ का एक प्रसंग देखिये—

'एक पू ही। पू खेते जाती। देलो में कमेड़ी मिली।

कमेड़ी पूछियो—तू पू कहाँ जाती ?

पू बोली—साम पूटमा।

कमेड़ी पूछियो—पूटेवी कस्यान ?

पू बोली—बटक बटक ?

कमेड़ी पूछियो—कटेवी कस्यान ?

पू बोली—कटर कटर।

कमेड़ी पूछियो—उंवेगी कस्यान ?

पू बोली—सदबद सदबद।

उक्त कहानीकार की जनवीध मानुर 'कमल' की 'बर मेंकना बर कुँवा'

कहानी राजस्थानी भात परम्परा पर आधारित है। प्रमथन्द की सीसी पर उन्होंने कई कहानियाँ लिखी हैं। श्री 'कमल' ने मनोवैज्ञानिक और प्रपत्तिशील कहानियाँ भी लिखी हैं। कथोपकथन में राजस्थानी के सबों और भाषों के सरल और सार्वक प्रयोग मिलते हैं। 'नये टेकनीक और नये प्रयोगों' की दृष्टि से भी श्री 'कमल' राजस्थानी के मनोवित कहानीकारों में अपना विशिष्ट स्थान बनाते जा रहे हैं।

रतनराम रावीर के कहानी संग्रह 'साड़ी के छोर' में सामाजिक मथार्थ का चित्रण करने वाली कई कहानियाँ हैं।

'गोही' लालूचम संस्कर्ता की २० कहानियों का संकलन है। श्री संस्कर्ता ग्रामीण जीवन के नये सजीव चित्र उठाते हैं। राजस्थानी राजस्थान की लोक भाषा है और राजस्थानी संस्कृति मूलतः गाँवों की ही संस्कृति है। इन्होंने प्राचीण समाज की स्थिति और बातावरण का चित्रण म्युनाधिक रूप में, राजस्थानी के सभी कहानीकारों में मिलता है।

'म्योही' संग्रह की कहानियों में गाँव के बातावरण रहन-सहन, हँसी-मजाक प्रादि का विस्तृत और मथार्थ चित्रण है। ग्रामीण परिवारों की समस्याओं और मनाभावनाओं का भी इनमें अच्छा और सही चित्रण मिलता है। कवि-हृदय श्री संस्कर्ता में पाठों की मन-स्थितियों की बाह्य या जेने की भी सामर्थ्य है। उनकी भाषा आकर्षक और प्राज्ञ है।

द्विबरीकास की बिरासत का सम्पादनकर २० श्री सती के छठे बरस की समाप्ति पर्यन्त सरस्वती की धनवरण साधना करने वाले द्विबरी के जयानुक्त साहित्यकार पुरोहित प्रतापनाथवरण ने राजस्थानी में भी कहानियाँ लिखी हैं। उनकी भाषा में जयपुर क्षेत्रीय बोली का पुट है। पुरोहितजी की एक लघु कथा 'हँसोपा काई' का प्रसंग देखिये।—

'जय रामजी की। बात की बात और कुरामात की कुरामात। बकरी ने चर गया बोरड़ी का पात। बोरड़ी के काँटे तीन हाथ सम्बो नीकी घणी पर तीन तलाब। एक में कायो एक छेँ सूजा घो एक में पाखी ही कोने। पाखी ही कोने ऊँ उतरणा तीन ठेक। एक मुम मया—एक डूब गयो घो एक को पतो ही नीने। पतो ही कोने ऊँका नू हवा तीन बामस एक भूत पयो एक कच यनी, घो एक मामो ही कोने।"

पुरोहितजी की हास्य कथा नार कथाओं की सीसी और टेकनीक पर आधारित है। लोक भाषणा के अनुसार भी बात बिलनी बिचिन हो वह उतनी

ही मनाकरक होती है। उसकी प्रभावोत्पादकता की कसौटी मर्बाय नहीं है।

बा कन्हैयालाल सहस्र ने 'नटो तो कहो मठ' में लोक-कथाओं को सरल और सरस रूप दिया है। भीमास मिश्र ने भी लोक-कथाओं पर आधारित ब स्वतन्त्र भाव-वस्तु की कई कहानियाँ लिखी है।

श्री कुम्भाचम धार्य श्री जयभाउयल व्यास और श्री मुरलीधर व्यास राजस्थान की राजनीति के उन खिलौनों में से हैं जो राजस्थानी संस्कृति और साहित्य के प्रति अत्यधिक आस्थापीन हैं। वे ही राजस्थानी के श्रेष्ठ लेखक हैं।

श्रीत रीत कुण्ड बाह्यी' नाम से श्री धार्य की एक लघु-कथा का उदाहरण प्रस्तुत है—

पंचतमी कथा कर, मिश्र रे भागे घाघण बमार बिराई रामायण री पौषी बोल और और मू पडे बुझा-बड़प गुगार्द-भाणस मुणन धावे मन्वान रा कीरतन कुण्ड ने बोलो मी लागे।

सरस और सरस धर्मियनित में लगे गुले धर्यों और मुहाबरेदार छोटे-छोटे वाक्यों में श्री धार्य अपनी बात कह लेते हैं।

राजस्थानी के बीतकार श्री रामदेव आचार्य एक प्रतिभाशाली कहानी लेखक भी हैं। उन्होंने भी लोक-कथाओं के आधार पर कई कहानियाँ लिखी हैं।

श्री बाळकृष्ण ने 'पंचतम्ब' की कथाओं' नाम से पंचतम्ब की विश्व-प्रसिद्ध कथाओं को राजस्थानी में अनुवादित किया है।

'धार्म पटकी' उपन्यास के रचयिता भीमास मयमल बोधी राजस्थानी के कुशल कहानीकार हैं। उनकी कहानियाँ में मर्बाय और कल्पना-बोधों अपनी पूर्ण सामर्थ्य के साथ पठते हैं। उनकी भाषा मुहाबरेदार हासी है।

श्री बोधी ने कई सुन्दर रेखाचित्र भी लिखे हैं। 'गुलबर्गमल' का एक उदाहरण देखिये—

'मर्बराइब बोठी मन्वास मील रो कोट। पदा में ऐसी पकरकी कर्बई मोवा भी माके ऊपर टीप टाप केसरियाँ पाप कपि ऊपर गामको बिको बुवा र मु बो बोने पू कस में प्राडो प्रावे। कर सपसरी डील-डील मठीको मन्वाइ में कुस्ती मू हुयोको हुवे बियो। मू धर्यां किङकावरी केरी ऊपर पुबक-ये है गुलबर्गमल-मैर रे बिजसीजर रा एक फिटर।

'सबकका' उनके ३१ राजस्थानी रेखा-चित्रों का संग्रह है, जिसे राजस्थानी साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है।

सुभी उमास्रधि और बंजनाथ वेंबार ने राजस्थानी में बूटकुले लिखे हैं। श्री संकरभास माहटा ने भी कई सुन्दर रेखाचित्र लिखे हैं।

कबिराज मोहनसिंह डिगल पिगल और राजस्थानी, समी में प्रच्छी रचना करते हैं। उनकी कहानियाँ सामान्यतया उपबेसारमक होती हैं। 'नाक नीं कादयो जाय' और 'री पुइकी पाने भी त्पार' तथा 'पर-बार म्यासा करणा पण बेठी म्यामी नीं करणी' आदि कहानियाँ मनोरंजन के साथ-साथ संवेदा भी देती हैं। वृष्टाण्ठों के सहारे मसीहत देने में कबिराजनी प्रधिक समर्थ हैं। 'और री पुइकी पाने भी त्पार' कहानी में ठकुराई के सामन और उसकी प्राप्ति के लिए किये जाने वाले पञ्चमर्थों की बर्ना है।

अन्य कहानीकारों में उदयवीर वर्मा मीनाराम वर्मा नारायणसिंह भाटी विजयवान देवा मोठीसिंह राठीइ और बन्नादान चारण के नाम उल्लेखनीय हैं।

राजस्थानी का आधुनिक-कथा साहित्य उसके लोक साहित्य से बड़ा प्रभावित है। यह राजस्थानी के पुनरुत्थान का काम है इसलिये प्राचीन साहित्य और लोक-साहित्य का इस काम में विशेष आदर रहना स्वाभाविक है लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं कि नयी राजस्थानी कहानी मात्र अतीत की ओर ही उन्मुख है। नये यथार्थ और अभिप्य की सम्भावनाओं के प्रति भी राजस्थानी का कथाकार कम जागरूक नहीं। उसकी रचनाओं में कथा साहित्य की नयी शैलियों और अभिव्यक्ति-वागधों के यथ उदाहरण मिलते हैं जिसकी प्रेरणा प्रांत की जनबामु और मापा के संस्कारों से पोषित है उस साहित्यकार की इस साहित्य में बड़ी भास्वा है और उसकी सम्भावनाओं का क्षेत्र भी दुर्बल नहीं है।

### उपन्यास

उपन्यास रचना के क्षेत्र में राजस्थानी साहित्य धारमिक पिछड़ा हुआ है। गिताने के नाम पर दो तीन उपन्यासों की रचना प्रचलन हुई है लेकिन सुजन के इस क्षेत्र की प्रगति धारमक प्रगतीय-जनक है, इस तथ्य की प्रस्वीकार नहीं किया जा सकता।

राजस्थानी के उनामक श्री गिरधर अरतिया का 'कनक सुन्दर' राजस्थानी का पहला उपन्यास है। इस उपन्यास के पूर्वार्ध का प्रकाशन सं० १९७२ में हुआ और उत्तरार्ध सम्भवतः सिखा ही नहीं गया। इसमें मारजाड़ी जीवन का सुन्दर चित्र अंकित किया गया है। समाज-सुधार ही इस उपन्यास का प्रेरक भाव है। पाठकों की ही भाँति श्री अरतिया के इस उपन्यास की भाषा में भी प्रवाद एवं अंकित है जिसका एक उदाहरण प्रस्तुत है—



दोहर दिन की बलवत चारपा कानी लू चाल रही थी। हवा का चोर लू लू मठी की उठी लें उ-उठ कर बीका नवा-नवा टीका हो रहा थी। मुह लो कर सामने चायनों मुस्कत थी। लू कपड़ा माहे बड कर साठ शरीर मे ककताय रही थी। लू इमी चोर की पड़ रही थी के खमी ऊपर पय बैलों मुस्कत थी। रास्ता माहे दूर-दूर कठे ही झड़ को नाव मही। बाबू उठकर लाना-बना नवा टीका होणे लू रस्ता को ठिकानो मही। घादमी लो दूर रस्ता माहे कीई बीक-बिनाबर को भी बरतण मही।

घनोली घान' मी बरीप्रसाद साकरिया रचित उपन्यास है जिसे साबूळ उपन्यासी रिचर्ड इस्टीद्यूट ने प्रकाशित किया है।

उपन्यास का कथानक तोपा री तरवार ऐतिहासिक लोक कथा पर आधारित है। बीरबर लोगा चठौर घपना सिर उठार कर लू म्यर हुषा घोर लसकी पति-बता पली मटिमानी लती हुई। लोना धारस-बरिब मुगल-कासीन बरबाटी रस्मो-रिवाज घोर लजपुठ बाति के घरीठ घोरव का बिभण मही लूरी से हुषा है। भावा पाना के अनुकूल है। मुस्लिम उहु' बातते हैं घोर लजपुठ लजस्वानी।

मुगलकामीन बरबाटी प्रयाएँ-बीमवार हाय बाबसाह के घानमन की सूचना लोचपुर बरवार में लजसिंह के घाने की सूचना महाराजा का लोच घाडीम की अनुहार बीड़ा रखना बरत को लजार्द, बनबासा लोपा की लबाटी भादि ललकामीन बाताबरण को प्रस्तुत करती है।<sup>१</sup>

लौसरे परिच्छेद में माटी सरवा का घपनी पली एव लूरी से नार्वालाप लीबस्वी घोर प्रभावपूर्ण भाषा में है।

पाँचवे परिच्छेद में प्रथम मिलन में भटिमानी के लजात बिचार देखिये—

'साठ लमलज सरवार मे मीर साहब भापणो बल लजलण साक बाख महीमा री मुह लो मे बाबेला। पिण लणो लो बिचार लही किमी के घापण लोनु बिणा माहे लू लठा मुह ल पही कोई लजल लोयो लो लो ठिकार्थे भालोडो कान पाखो की कर बलीमा।

लोना की बीर-भासा घपने लूज बीर लूजबलु को मरणापीर में मिमन्जन करने बाने के लिए बिबा लैते समय घपने को बन्ध लमलठी है।

१? में परिच्छेद में लजलकी का प्रत्यक्ष लोना बीर लोना क ललरीर बिबाई

१ बरवा बरप २ लज ३—बीलाब मिम की लमीमा।

बैना तथा उसका कथन भाव के लिए प्रतीक है, पर कथा का आधार बूँकि नोक-कबा है अथ यह विचित्रता भी अधिक नहीं लगती ।

राजपूत संस्कृति के उज्ज्वलतम पहलू 'अनोखी पान' में मिलते हैं ।<sup>१</sup> उत्कालीन संस्कृति का उद्घाटन करने के नाते एक लोग जैसे बीर के छाहस प्रतिज्ञा-वासन, आत्म-विश्वास और अद्भुत धीर्य तथा भटियानी के पति-व्रत त्याग बलिदान और संयम के भावसे इस उपन्यास में पाठकों के समक्ष चित्रित किये गये हैं ।

'घानै पटकी' धीसास मधमस ओछी द्वारा रचित उपन्यास है । इस भी ठाण्ड राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट ने ही प्रकाशित किया है । कुछ लोगों ने 'घानै पटकी' को ही राजस्थानी का प्रथम उपन्यास कहा है ।

इस उपन्यास का आधार एक दुनिया की कहानी है । किसना अपने पिता और घाई नौबाई के जादू-म्यार में पसकर बड़ी होती है । उसका विवाह घनी परिवार में होता है लेकिन वह धीघ्र ही विधवा हो जाती है । पति हरिपन्ध्र विमान दुर्घटना का शिकार हो जाता है । ससुराल व समाज के लोग उसे पतित करना चाहते हैं । वह अपने देवर मोहन को जो बम्बई में डाक्टरी करता है, परिस्थिति से प्रबल करती है । उत्पन्नवात् समाज-मुषार समा के मन्वी किशनमोपाल से किसना का विवाह निश्चित कर दिया जाता है ।

पंचायत विवाह करते कराने बालों व उनके समर्थकों को जाति से बहिष्कृत कर देती है । विवाह के निश्चित दिन किशनमोपाल को १०५ डिग्री बुधवार हो जाता है अथ विवाह स्मरित हो जाता है । उधर मोहन की पत्नी का निधन हो जाता है । अतः परिबर्धित परिस्थिति में किसना का विवाह मोहन के साथ होता है । दोनों मानस से रहते हैं और माहम के पिता के नाम पर 'रामचन्द्र बर्मन' चिकित्सालय खोलते हैं । किसना गाँधीवादी सोसलर सेवा करती है ।

उपन्यास सुन्दर बन पड़ा है । भाषा सरल सरल प्रभावपूर्ण और मुशारेबाह है ।<sup>२</sup>

## साहित्य का इतिहास

प्रागुक्त काल में राजस्थानी भाषा और साहित्य का इतिहास निर्माता की विधा में भी प्रचलन हुए हैं । राजस्थान साहित्य अकादमी के सचिव और राजस्थानी के विद्वान डा मोतीसाज मेनारिया ने इस विधा में सराहनीय

१. बरदा बर्ष २. अक्षु ३.—धीसास मिथ की समीक्षा ।

२. अणवीर घर्मा की समीक्षा ।

बोगदाप दिया है। उनके तीन ग्रन्थ १ राजस्थानी भाषा और साहित्य २ राजस्थान का विगत साहित्य तथा लीसरा ३ बिजल में बीर रस-राजस्थानी साहित्य पर व्यापक प्रकाश बासते हैं। राजस्थान के कई धजात किन्तु समर्थ लेखकों को सर्व प्रथम प्रकाश में लाने का योग डा० मेनारिया को है। राजस्थान में बिजल की ही नहीं विगत साहित्य की भी विपुल मात्रा में रचना की है। बिजल और विगत दोनों बाराभा के जात धजात लेखकों एक कविता का परिचय तथा काल और विकासक्रम के अनुस्य उन्हें ऐतिहासिक व्यवस्था में संवारकर डा० मेनारिया ने राजस्थानी की बड़ी सेवा की है। राजस्थानी सापेक्षित विभिन्न बोलियों का बर्गीकरण ग्रन्थ विद्वानों की मान्यता के सम्बन्ध में राजस्थानी भाषा की प्रतिष्ठा प्राचीन और धर्माधीन बिजल धमध्र ध की परम्परा रचित साहित्य का मूल्यांकन तथा रचनाकारों के इतिहास-निर्माण में डा० मेनारिया ने सर्वाधिक योग दिया है।

साहित्य के धाचार्य प्रो नरोत्तमदास स्वामी की 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' पुस्तक राजस्थानी भाषा का सागोपाम सम्पूर्ण अध्ययन और राजस्थानी के साहित्य की भरपूर जानकारी प्रस्तुत करती है। स्वामीजी ने राजस्थानी साहित्य-परम्परा तथा उसकी प्र रक धितियों का विस्तार से परिचय दिया है और उसका मूल्यांकन भी किया है। राजस्थानी के गये लेखकों की जो पीढ़ी इन बिना साहित्य रचना कर रही है उसे स्वामीजी का पूरा सहयोग और मार्ग दर्शन मिषता है। राजस्थानी साहित्य से सम्बन्धित धास्य ही कोई ऐसी प्रबृति हो जिसकी जानकारी उन्हें न हो।

बीकानेर के भी धररररर नाहटा ने भी राजस्थानी की बड़ी सेवा की है और धास्य भी कर रहे हैं। भाषा और साहित्य का इतिहास लिखने वाले व्यक्ति में बिजल अध्ययन धूम-धूम और धतुमन की धावरररर होती है यह भी नाहटा में है। धाप धास्य संरचित राजस्थानी के विज्ञान पुस्तक धम्धार से राजस्थानी साहित्य का बड़े से बड़ा और प्रासासिक इतिहास लिखा जा सकता है। प्राचीन साहित्य और उसके मूयों की बिजली जानकारी नाहटाजी को है उतनी धस्य किसी को नहीं। राजस्थानी साहित्य और लोक साहित्य से सम्बन्धित कोई भी कार्य नाहटा जी से मिने बिना पूरा नहीं होता।

सैकड़ों लेखों में नाहटाजी ने राजस्थानी साहित्य का प्रासासिक परिचय दिया है और साहित्य क्षेत्र की कई धातियों का मिषाकरण करके उसकी धम्भाधनाओं का धार खोला है। नाहटाजी ने प्रथम तक जो भी और बिजले में लेख लिखे हैं वे सभी राजस्थानी साहित्य के इतिहास के बिबारे धुप

महत्वपूर्ण पृष्ठ हैं। राजस्थानी की जो सेवा उन्होंने की है उसे मुनाया नहीं जा सकता।

यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि साहित्य में किया गया शोध कार्य ही उसका इतिहास बनाता है। मठ २० वर्षों का हमारा विकास इस बात का साक्ष्य है कि मात्र राजस्थानी के लिए ही नहीं अन्य भाषाओं और उनमें रचित साहित्य के लिए भी जित समस्याओं या भावों पर शोध कार्य किया जाता रहा है उसमें राजस्थान के ग्रंथ भण्डारों ने ही सर्वाधिक वापदान किया है।

राजस्थानी को अपने अस्तित्व की सड़ाई लड़ने में काफ़ी समय लगा है इसलिए कहा जा सकता है कि राजस्थानी भाषा और साहित्य का इतिहास तो घब लिखा जा रहा है। साहित्य की मनोवृत्ति वैजुमार प्रकृतियों का समावेश हुए बिना राजस्थानी का इतिहास अभी अपूर्ण ही कहा जायगा। इस ओर निरन्तर प्रयत्न हो रहे हैं।

शोध संस्थान जौपुरानी से प्रकाशित 'परम्परा का मोटा हटका' अर्द्ध भारतीय स्वाधीनता संग्राम के समकालीन राजस्थानी कवियों और उनके सृजन की पर्याप्त जानकारी प्रस्तुत करता है।

अर्थात् राजस्थानी गद्य और 'अर्थात् राजस्थानी काव्य' शीर्षको से श्रीमान मिश्र ने प्राचिन साहित्य की प्रकृतियों को संजोया है और उनका मुद्रांकन भी किया है।

श्री मनोहर शर्मा ने साहित्य के इतिहास के कई पृष्ठ लिखे हैं जिन्हें अनेक सेखों में देखा जा सकता है।

इतिहासज्ञ डा० दयाराम शर्मा ने 'पृथ्वीराज रासो' से सम्बन्धित विवाद में अपनी अनुसन्धानपूर्ण माय्यताएँ स्थापित की हैं।

डु० देवीप्रसाद शर्मा ने इसके काफ़ी पहल ही राजस्थान के सेखों की सूचियाँ बनाई थीं।

शोध संस्थान—राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर ने 'राजस्थान में प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की लोज के चार भागों में सैकड़ों प्रशात ग्रन्थों की जानकारी की है। हणुतसिंह ने 'त्रियम ने नाटी' तथा पुरुषोत्तम मेनारिया ने 'राजस्थानी भाषा और उसकी माय्यता का प्रश्न' पुस्तकों में भाषा और साहित्य की ऐतिहासिक व्यवस्था का मार्ग प्रदस्त किया है।

राजस्थानी साहित्य का इतिहास वर्तमान स्थिति में मूसत दोनों ग्रन्थोम्यापित है इसलिए शोध कार्य परिच्छेद में इसकी विस्तृत चर्चा की जायगी।

## व्याकरण-कोष-भाषाविज्ञान

रणबाड़ी में लिखी हुई विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों को भाषा का एकीकृत रूप देने भाषा की व्याकरण तैयार करने तथा विभिन्न और राजस्थानी के सभ्य-कोषों के निर्माण का कार्य भी इस काम में हुआ है जिससे इस भाषा और साहित्य के विकास में पर्याप्त सहायता मिली है ।

स्व० श्री रामकृष्ण भासोपा इस क्षेत्र में भी प्रयत्नी है । 'मारबाड़ी-व्याकरण नाम से भाषा ने ही सर्व प्रथम राजस्थानी व्याकरण सिद्धा को सं० १९३३ में प्रकाशित हुआ । श्री भासोपाजी ने मारबाड़ी की कई प्रारम्भिक पुस्तकें भी लिखीं तथा राजस्थानी विंगस के दो कोष तैयार किये । पहला बृहद् कोष ६० ०० अक्षरों का है जिसमें अक्षरों की उत्पत्ति तथा हिन्दी व अंग्रेजी अक्षर हैं । दूसरा २० ० अक्षरों का संक्षिप्त विंगस कोष तैयार किया ।

पण सन् १९७२-७३-७६ में प्रकाशित बीम्स के प्राबुनिक भारतीय-भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण' में राजस्थानी का व्याकरण भी दिया गया है ।

सन् १९७७ में डा० रामकृष्ण गोपाल मण्डारकर ने 'दिल्लिन भाषा वैज्ञानिक भाषणमात्रा' में मेवाड़ी और मारबाड़ी की कुछ विशेषताओं का भी उल्लेख किया ।

सन् १९७८ में डा० के.सोम ने भी राजस्थानी के व्याकरण पर प्रकाश डाला है ।

इसी संदर्भ में डा० टैसीटोरी और डा थियर्सन का नाम भी उल्लेखनीय है । डा थियर्सन ने सन् १९ ७ व १९ ८ में Linguistic Survey of India की दो खिस्कों में राजस्थानी का तुलनात्मक व्याकरण प्रस्तुत किया है । इसमें ऐतिहासिक परम्परा की कमी थी । भाषा के विकास की रैखा बुझिस एवं अस्पष्ट थी । डा० टैसीटोरी ने इस कमी को पूरा किया ।

पुस्तकी परिचामी राजस्थानी के द्वारा डा० टैसीटोरी ने अणम स और प्राबुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की उस सोई हुई कड़ी के पुनर्निर्माण का प्रयत्न किया है जिसके बिना किसी प्राबुनिक भाषा का ऐतिहासिक व्याकरण सिद्धा ही नहीं जा सकता । भाषा विज्ञान सम्बन्धी आपके निम्न दो लेखों का उल्लेख आवश्यक है—

1 "Origin of the dative and genitive and dative post-position in Gujarati and Marwari" (1913)

2 "The wide sound of 'A' and 'O' in Marwari and Gujarati" (Ind Ant Sep 1918)

डा० टेसीटोरी का लिखा प्राचीन राजस्थानी का व्याकरण इंडियम एटिक्वेरी में प्रकाशित हुआ था। उसका हिन्दी अनुबाध 'पुरानी राजस्थानी' नाम से काशी की नागरी प्रचारिणी सभा ने प्रकाशित किया है।

डा० प्रियर्सन की पुस्तक 'Linguistic Survey of India' के नवें खण्ड के द्वितीय भाग में राजस्थानी और उसकी विभिन्न बोलियों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। मैकासिस्टर ने डूडाड़ (जयपुर राज्य) की बोलियों का सर्वे करके उनका अध्ययन प्रस्तुत किया।

सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डा० सुनितिकुमार चाटुर्ज्या ने भी राजस्थानी का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। 'राजस्थानी भाषा' पुस्तक में उनके राजस्थानी विषयक विज्ञतापूर्ण भाषाओं का संकलन है।

'राजस्थानी उत्तर भारत की वर्तमान देश-भाषाओं में सबसे प्राचीन भाषा है। उसे अपभ्रंश की सेठी बेंटी कह सकते हैं। अपभ्रंश के अभिक्रम साहित्य की रचना इसी प्रदेश में हुई।'

भाषा के गम्भीर अध्येता विद्वेषक और अभिकारी विद्वान प्रो० नरोत्तम दास स्वामी की एक भाषा-वैज्ञानिक के रूप में महती प्रतिष्ठा है। आप राजस्थानी हिन्दी संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश गुजराती बंगला मराठी, अंग्रेजी रूसी और जर्मन आदि विषय की कई भाषाओं के जानकार हैं। साहित्य की स्नातकोत्तर-कक्षाओं के ही नहीं साहित्य के घोष-स्नातकों के भी आप मार्ग दर्शक हैं। व्याकरण भाषा-विज्ञान धसकदार शास्त्र और लोक-संस्कृति आपके अत्यधिक प्रिय विषय हैं। आपकी रंजी में स्वच्छता और स्पष्टता है जो बटिप्तता और घाबरेल से कोसों दूर है। साहित्य-संसार की प्राचीन संभार प्राकृतिकतम धाराओं तक आपकी समाप्त गति है। राजस्थानी-भाषा और उसके व्याकरण पर आपकी निम्न दो पुस्तकें सर्वाधिक भाग्य हैं—

१ राजस्थानी-भाषा और साहित्य—इसमें राजस्थानी का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

१ प्रकाशक—साहित्य संस्थान—राजस्थान विद्यापीठ जयपुर।

२. प्रो० नरोत्तमदास स्वामी।

२. श्रीसप्त राजस्थानी व्याकरण—इसमें राजस्थानी-भाषा का व्याकरण संक्षेप में दिया गया है।

राजस्थानी के भाषा वैज्ञानिक स्वरूप उसके महत्व तथा उसकी व्याकरण सम्बन्धी अनेक गुणियों के समाधान के लिए स्वामीजी ने समय-समय पर कई लेख भी लिखे हैं जिनसे राजस्थानी की भाषा सम्बन्धी मान्यता को बड़ा बल मिला है।

श्री सीताराम साहस इन दिनों घोष संस्वान चौपासनी द्वारा प्रकाशित किये जा रहे 'बृहत् राजस्थानी कोष' का सम्पादन कर रहे हैं। यह कोष लगभग एक लाख शब्दों की जानकारी प्रस्तुत करेगा। श्री साहस की यह एक महत्वपूर्ण देन होगी।

श्री सीताराम साहस ने 'राजस्थानी व्याकरण' भी तैयार की है जो प्रायः राजस्थानी सीखने वाले कई छात्रों को सहायता पहुँचा रही है।

घोष संस्थान चौपासनी ने इससे पूर्व भी 'परम्परा' त्रैमासिक के विशेषांक के रूप में प्राचीन शैली के पदावयव कोषों का संग्रह प्रकाशित किया है। इस कोष के सम्पादक श्री नारायणसिंह भाटी हैं।

श्री तुलाराम जोशी द्वारा सम्पादित 'राजस्थानी शब्दकोष' के कुछ पृष्ठ 'बरवा' में प्रकाशित हुए हैं। इन शब्दों का प्रचार क्षेत्र बेलावाटी तक ही सीमित है।

सादम् राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर ने भी कई वर्ष पहले श्री नरोत्तमदास स्वामी के सम्पादन में राजस्थानी शब्द कोष की एक विरल योजना बनाई थी जिसका कुछ क्रियात्मक रूप राजस्थान मास्टी के पत्रों में देखने को मिलता है। यह संस्था भिन्न-भिन्न प्रश्नों और बोझ-बास के अनेक प्रश्नों वाले शब्दों का वर्गीकरण बर्षे मानानुक्रम संस्कृत-भाष्यत घषभ्रस-वैसी-फारसी और अरबी के समानार्थी शब्द शब्दों की उत्पत्ति निर्देशक उत्पत्ति व्याकरण हिन्दी में प्रश्न प्राप्तिक संकेत विशेषण व क्रिया के रूप, शब्दो उचित मुहावरे व्याख्या एवं विवरण से सम्पूर्ण बृहत् कोष का निर्माण कर रही है। कोष के लिए तीन लाख शब्दों का संग्रह और उनमें से ६०-७० हजार शब्दों के एकीकरण का काम कर लिया गया है। श्री बन्नीप्रसाद चौकरिया द्वारा सम्पादित कुछ शब्दों का प्रकाशन भी देखने को मिलता है। इस समय इसका कार्य श्री प्रवरचन्द्र नाहटा के निरीक्षण में श्री बन्नीप्रसाद चौकरिया कर रहे हैं।

हाड़ोटी क्षेत्र के श्री नाथुमान पाठक 'हाड़ोटी शब्दकोष' और 'हाड़ोटी

व्याकरण' पुस्तकें मिल रही हैं, साथ ही एक पारिभाषिक सम्प्रकोप भी योजनांतर्गत है। क्षेत्रीय भाषार पर किये जा रहे इन ठोस कार्यों से राजस्थानी को बड़ा बल मिलेगा।

महाकवि सुमनस के समय के सुरल पदजातु ही इस विद्या में एक और प्रयत्न याद आता है। कविराजा मुरारीदास जी ने भी एक ङिगसकोप तैयार किया था।

सर सुकदेवप्रसादजी को कदमीरी होते हुए भी राजस्थानी भाषा से बड़ा प्यार था। इन्होंने भी एक 'मारवाड़ी व्याकरण' बनवायी थी। उन्होंने कुछ ग्रन्थ पुस्तकें भी लिखीं—जैसे—

१. बातचीत करण रा कुमला । २. मारवाड़ी सू हिन्दी में ।

### शोध-कार्य एवं समालोचना

राजस्थान के राजा-महाराजा और सामन्त कलाकारों और कवियों के प्राग्भवदाता रहे हैं। एक हाथ में कीर्णा—दूसरे में तलवार मड़ी इस मरभारती का शृंगार रहा है। अतः राजस्थान के कई राज-महाराजों में प्राचीन साहित्य की बहुमुख्य पोखियाँ मिली हैं। इसके प्रतिरिक्त राजस्थान के मन्त्रियों में विशेषतः जैन मन्त्रियों मठों और व्यक्तिगत पुस्तक-संग्रहों में सुरलित प्रयाग साहित्य-सम्पदा की भी प्रबल कोश होने लगी है और राजस्थानी में साहित्य के शोधकर्ताओं का मार्ग प्रशस्त होता जा रहा है।

इतिहासज्ञ कर्नल टाड और रायबहादुर गौरीसंकर हीराचन्द घोष ने इतिहासकारों का दामिर्ब निमाणे के साथ-साथ राजस्थान के साहित्य की भी खर्षा की है। वस्तुतः राजस्थान के इतिहास की जानकारी इस प्रान्त में रचित साहित्य और लोक-साहित्य के बिना मिल भी नहीं सकती।

हिन्दी साहित्य की पूर्व परम्परा में अथर्व वेद का जो महत्व स्वीकार्य गया है, उस अथर्व वेद का सबसे अधिक साहित्य राजस्थान में ही रचा गया है।

राजस्थानी के इन प्राबुनिक काल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस समय राजस्थानी भाषा की माग्गता और उसमें रचित साहित्य की प्राग्भवकता को एक मिश्रित भावना के रूप में ध्येयकार किया गया। फलतः राजस्थान की लोक-संस्कृति लोक साहित्य और प्राचीन साहित्य की दोष मोक्ष संरक्षण मूर्त्याकन और प्रकाशन की लयन विद्येसे वर्षों में बड़े वेग से बढ़े हैं। इतना ध्येय है कि इस प्रास्थापान माग्गता के कारण अनुसंधान कार्य का ता व्यापक विकास और विस्तार हुआ लेकिन यही मूर्त्याकन और



संतुलित समालोचना का पक्ष अपेक्षाकृत दुर्बल रहा। यह सम्भवतः इसलिए भी कि वस्तु को सर्व प्रथम अपने समग्र-रूप में प्रस्तुत करना होता है। अपने काट-छाँट और आलोचना प्रत्यालोचना की चीड़ी बुरी है।

यहाँ यह स्वीकार करना पड़ता है कि राजस्थानी के लेखकों पाठकों को बर्ताओं और आलोचकों-सभी में इस माप्यता के कीटाणु बुरी तरह से बिपके हुए हैं कि राजस्थानी में जो लिया गया है या लिखा जा रहा है वह सभी अच्छे साहित्य है। अब राजस्थानी के समर्थकों को अपने अस्तित्व से अधिक यह निष्ठा रक्षनी चाहिए कि राजस्थानी में लिखा गया साहित्य कितना अच्छे है और उसका भुम्ब क्या है ?

राजस्थानी में शोध-कार्य की गति देने उसे विकसित करने तथा राजस्थानी के प्रति शोधकर्ताओं की रुचि जागृत करने आगे में सबकी रामकण्ठ आलोचना डा० रामसिंह नरोत्तमदास स्वामी अमरचन्द नाडटा डा० मांठीनाम मेनागिया भुवि विनविजयजी और डा० कन्हैयालाल अहल के नाम सर्व प्रथम उल्लेखनीय हैं।

महामहोपाध्याय पं० रामकण्ठ आलोचना ने हिन्दी और राजस्थानी की अविस्मरणीय सेवाओं की हैं। नाडटाजी के एक लेख से पता चलता है कि आलोचनाजी ने १२ वर्ष की अस्यायु में ही सारस्वत पुराई 'अभिका उत्तराई' श्रीमद्भागवत 'रघुवंश' 'मात्र-काव्य' और 'ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन कर लिया था। 'भाऊ' और 'माधव निदान' शब्द आपने हाथ से लिखकर पड़े। श्रीमद्भागवत का सर्व प्रथम हिन्दी अनुवाद करने का श्रेय भी आलोचनाजी को ही है। आपने तुलसीदास रामायण की कड़ी बोली में टीका भी की।

संस्कृत हिन्दी राजस्थानी व अंग्रेज सभी भाषाओं की आपने बड़ी सेवा की। सन् १९७६ में 'राज्य पद्याटिक सोसाइटी' ने अंग्रेज शीतों का संग्रह किया। आलोचनाजी तत्सम्बन्धित समिति के मंत्री थे। अंग्रेज साहित्य के संग्रहकर्ता के रूप में जी आपका नाम सर्व प्रथम आता है। डा० टैसीटोरी को आपने ६ मास में राजस्थानी का प्रारम्भिक ज्ञान कराया। उन्हें राजस्थानी साहित्य का पुनः-प्रतिष्ठापक कहा जाता है।

पट्टे-परबाको प्राचीन लिपियों और अरिया पुरानी हस्तलिखित पोथियों को पढ़ने में आप कुशल थे। इसी विमल-वाकित्य से प्रभावित होकर तत्कालीन बिदेसी गुरु ने आपको महामहोपाध्याय की पदवी से विभूषित किया।

आलोचनाजी ने पाठियों के कई इतिहास लिखे हैं तथा राजस्थानी के साहित्य और इतिहास सम्बन्धी कई ग्रन्थों का सम्पादन किया है। भुक्ति-मूर्ति और

नूतन ग्रन्थों को वे इतिहास की एक कड़ी समझते थे और इसी कारण उनकी किसी एक ग्रन्थ पर आस्था नहीं थी। वे राजस्थानी-साहित्य संस्कृति और इतिहास के युग प्रवर्तक पुरुष थे।

निज के प्रयत्नों और मित्रों के सहयोग से आसोपासी राजस्थानी-साहित्य और लोक-साहित्य के कई बहुमूल्य ग्रन्थों को प्रकाश में लाये गया—

१ बासा माल रा बाहा २ बेसी क्रिसन चक्रमणी री ३ राजस्थानी बातों ४ राजस्थान के लोक गीत ५ राजस्थानी लोक गीत ६ बटमस ग्रन्थावली ७ दोसावण ।

अप्रकाशित ग्रन्थों में—

१ राज अंतसी रो सूर्य २ ऐतिहासिक गीत ३ चारली गीत ४ ज्योत्स्ना (काव्य) ५ मेवमासा (काव्य) ६ कानन कुमुमाञ्जलि (काव्य) ७ इन्द्रचाप (काव्य) ८ स्वर्गाधम (निबन्ध सग्रह) ९ मित्रों के पत्र ।

श्री धर्मरत्न नाहटा के जीवन की सबसे बड़ी साधना राजस्थानी की सेवा ही है। राजस्थानी-साहित्य और लोक-साहित्य के विविध प्रसङ्गों और प्रवृत्तियों पर आप इन पत्रियों के लिखने तक १२०० से भी अधिक लेख लिख चुके हैं। उन्होंने २० हजार हस्तलिखित प्रतियों का परिसीसन और मध्यमिक हस्तलिखित प्रतियों का निरीक्षण कर लिया है। ३० हजार से भी अधिक हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची तैयार करके आपने कई महत्वपूर्ण-कार्यों के साहित्य का पता समायामा है।

डा० प्रेमनारायण टण्डन और अन्य कई विद्वानों ने इस मायगता को बस दिया है कि १५ वीं १६ वीं और १७ वीं शताब्दी में राजस्थानी गद्य-साहित्य का महत्वपूर्ण अङ्ग जैन धर्म सम्बन्धी रचनाएँ हैं। सम्बन्धित शताब्दियों तथा इनसे पूर्वक कालों में भी रचित जैन-साहित्य की खोज करने तथा उसे शोध-कर्ताओं के समक्ष लाने का श्रेय श्री नाहटाजी को प्राप्त है। जैन-साहित्य के सम्बन्ध में उनकी बिलसण जानकारी है और उन्होंने अपने सँकड़ों लेखों में यह प्रमाणित किया है कि राजस्थानी-साहित्य तथा उसकी परम्परा को जैन साहित्य की कितनी महत्वपूर्ण बेन है। बिगस और राजस्थानी साहित्य तथा लोक-साहित्य की मज-तम बिलसरी हुई सामग्री का एकत्रित करके और उसे शोध-कर्ताओं के बीच प्रतिष्ठित करके उन्होंने साहित्य का पुनर्बहार किया है। प्रामाणिक बिद्या की दृष्टि से सामान्य सी स्तूती सिखा प्राप्त श्री नाहटा भारत-भर के बिद्वान-बिद्यालयों के शोध-स्नातकों के पय-दृष्टा रहे हैं।

साहित्य-शास्त्र भाषा-विज्ञान और व्याकरण के पण्डित साहित्योपासक प्रो० मरोत्तमदासजी स्वामी का राजस्थानी-साहित्य के प्रति प्रभाव ममत्त्व है। राजस्थानी को भाषा के रूप में प्रतिष्ठा दिलाने उसके भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रमाणित करने तथा उसमें उचित साहित्य को सम्मिलित करने और प्रकाशित करवाने में स्वामीजी ने जीवन के सर्वाधिक बहुमूल्य क्षणों की समना समर्पित की है। वे काव्य की धारणा के कुशल पारंगत हैं। एक उबार किन्तु संतुलित सामर्थ्य के साहित्यवेत्ता श्री स्वामीजी ने राजस्थान और राजस्थानी में शोध कार्य की प्रवृत्ति को बड़ा बल पहुँचाया है। साहित्य के उच्च शिक्षा प्राप्त छात्रों और प्रांत के नवोदित लक्षकों में राजस्थानी साहित्य के प्रति अनुपम जमाने वाले स्वामीजी गत कई वर्षों से विश्व-विद्यालय के शोध-स्नातकों के 'गार्ड' हैं। विशेषतः राजस्थानी-द्विगल-गुजराती हिन्दी और अपभ्रंश भाषाओं में उचित साहित्य एवं संस्कृत-शोध-पूरी जानकारी के लिए उन्हें विश्वस्तरीय प्रामाणिक अधिकारी का सम्मान प्राप्त है। राजस्थानी की नयी सृजन-आराधना और शिक्षकों को उनका मार्ग-दर्शन और संरक्षण प्राप्त है।

स्वामीजी के अब तक २०-२२ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं, सयभग इतने ही अप्रकाशित हैं। चन्द्र बरबाई से लेकर महादेवी तक और अन्ततः श्री साहित्य की धारणा ही कोई प्रवृत्ति हो जिसकी जानकारी उन्हें न हो।

उनकी कुछ पुस्तकें निम्न हैं—

१ राजस्थान का झूहा २ राजस्थान के लोकगीत ३ राजस्थान के ग्रामगीत ४ बोसा मारु का बोहा ५ राजस्थानी भाषा और साहित्य ६ गीत संवाक्य ७ सूर समीक्षा ८ सूर साहित्य सुधा ९ तुमही सुधा १ मधुमावली ११ संरक्षक प्रसंग १२ अक्षरकार परिचय १३ स्वर्ण महोत्सव पाठमाला १४ हिन्दी पद्य परिचय १५ हिन्दी पद्य साहित्य का इतिहास १६ कबीरदास १७ बिबेली १८ उषिया का झूहा १९ अपभ्रंश पाठमाला २ राजस्थानी साहित्य की स्वरूपा २१ शोध और गवेषणा सम्बन्धी लेख ।

'राजस्थान का झूहा' पर उन्हें साहित्य सम्मेलन प्रयाग के 'मानसिंह पुरस्कार' से सम्मानित किया है।

इटली के स्व० डा टेसीटोरी की भारतीय भाषाओं में बड़ी रुचि थी। उन्हें अंग्रेजी लैटिन ग्रीक जर्मन भाषा के साथ साथ भारतीय भाषाओं-संस्कृत प्राकृत नयी व पुरानी गुजराती अपभ्रंश राजस्थानी द्विगल हिन्दी

इस और उर्दू का ज्ञान था। इटली के फ्लोरेन्स विश्वविद्यालय से आपने 'रामचरितमानस' शोध निबन्ध पर पी-एच० डी० की डिग्री प्राप्त की। आप सन् १९१४ में रामस एशियाटिक सोसाइटी के लिए (Bardic and historical survey of Rajputana) के कार्य के सुपरिन्टेन्डेन्ट के पद पर बाएँ प्राये। ३१ वर्ष की अवस्था में २२ नवम्बर सन् १९१९ को बीकानेर में ही आपकी मृत्यु हुई।

डा० टेसीदोरी ने राजपुताना में जो महत्वपूर्ण शोध कार्य किया उसकी रिपोर्ट रामस एशियाटिक सोसाइटी की सन् १९१४, १९१५, १९१६ और १९१७ की चार बिस्वा में प्रकाशित हुई है। कल के सम्बन्ध में उनकी मान्यता थी—

Not a pleasure trip it is battle that grends

आपने निम्न तीन विगस ग्रन्थों का सम्पादन किया—

- १ बेसी कृष्ण टकमणी री
- २ बचनिका राठीइ रतनसिंहजी री
- ३ छन्द राठ बइतसी रो।

पुणजी पश्चिमी राजस्थानी के द्वारा डा० टेसीदोरी ने अपभ्रंस और प्राकृतिक भारतीय भाषाभाषा के बीच की उस खोई हुई कड़ी के पुनर्निर्माण का प्रयत्न किया है जिसके बिना किसी भी प्राकृतिक भाषा का ऐतिहासिक व्याकरण सिखा ही नहीं जा सकता।

बिड़सा प्रोफेसर कासेज विसानी के उपाचार्य डा० कन्हैयालाल सहज हिन्दी और राजस्थानी के सम्मान्य शोध विज्ञान प्रासोचक और विचारक हैं। हिन्दी के प्रासोचना क्षेत्र में भी आपकी निम्न पुस्तकों ने मान्यता प्राप्त की है—

१ समीक्षाएण २ प्रासोचना के पद्य पर ३ समीक्षावलि ४ चार समीक्षा ५ विवेचन ६ कामायनी का अध्ययन।

डा० सहज ने मनोविज्ञान शैक्षणिक समीक्षा व्यावहारिक समीक्षा तथा रसज्ञ और संस्कृति सम्बन्धि अनेक लेख लिखे हैं।

राजस्थानी साहित्य की शोध एवं समीक्षा के क्षेत्र में भी डा० सहज ने महत्वपूर्ण सेवाएँ की हैं। 'बीबोली' 'हरजसदावनी' 'राजस्थानी कहानों' 'राजस्थान में ऐतिहासिक प्रवास' 'बीरसतमई' 'नटो ठा कहो मठ', प्रादि उनकी सम्पादित और रचित पुस्तका ने राजस्थानी साहित्य की प्रतिष्ठा को बस पहुँचाया है।

'राजस्थानी लोक कथाओं के मूल समिग्राम' नाम से डा० सहन की निरन्तर मासा इन दिनों एक साथ कई पत्रों में प्रकाशित हो रही हैं।

लोक कथावर्तों सांस्कृतिक उपासमान और ऐतिहासिक प्रवाद जैसे विषयों में विशेष रुचि और महान सम्ययम का परिचय देकर डा सहन ने कई महत्वपूर्ण किन्तु साहित्य-क्षेत्र से उपेक्षित विचारों को पुन प्रतिष्ठापित किया है। 'राजस्थानी कथावर्त एक अध्ययन' पर डा० सहन को 'डाक्टरेट' मिली है। वे 'शोध पत्रिका' और 'मरुभारती' पत्रिकाओं के सम्पादक मण्डल में भी हैं।

डा मोतीलाल मेनारिया पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने राजस्थानी भाषा और साहित्य से सम्बन्धित शोध पर पी-एच डी० प्राप्त की है। डा मेनारिया की शोध प्रवृत्तियों की यह विशेषता रही है कि उन्होंने जिनके साथ साथ राजस्थान की पिमल चारा के भी कई प्रकाश कवियों का परिचय दिया है। उनकी राजस्थानी भाषा और साहित्य 'राजस्थान का पिमल साहित्य' तथा 'द्विपक्ष में बीर रघु' बीसी पुस्तकों के प्रकाशन से राजस्थानी के शोध कर्त्ताओं का मार्ग प्रशस्त हुआ है। प्राचीन साहित्य की ऐतिहासिक शोध के क्षेत्र में भी डा मेनारिया ने कई माध्यमों स्थापित की हैं। राजस्थानी भाषा साहित्य और संस्कृति के पुनरुत्थान की दिशा में अब-अब जो भी कार्य हुए हैं उनमें डा मेनारिया का योगदान रहता था है।

डा० रामसिंह तेंबर एम ए० संस्कृत हिन्दी और राजस्थानी के विद्वान हैं। इनके रचित और सम्पादित ग्रन्थों का व्यौरा इस प्रकार है—

१ कानन कुमुदाजलि २ मेघमाला ३ अयोध्या ४ वेत्तिविद्यन स्तम्भणी ५ १ डोसामाक ६ वृहा ७ अटमल प्रन्वावली ८ अथ राज वीरसी रो ९ राजस्थान के लोकगीत १० अथ भीतिका ११ सीरम १२ किरणिका १३ अथ वली के मजन।

स्व रामकृष्ण ब्राह्मण मरोत्तम स्वामी और डा रामसिंह शोध विद्वानों और साहित्यकारों की इस तपी ने स्वतन्त्र रूप से जो और पारिस्परिक सहयोग से कई ग्रन्थों का निर्माण किया है। डा रामसिंह की भाषा सरस विचार व्यञ्जना कवित्वपूर्ण और बर्णन शैली स्वामानिक है।

राजस्थान पुरातत्वान्वेषण मन्दिर के प्रधान निबंधक मुनि जिनविद्यवती भारतीय पुरातत्व और अथ साहित्य के प्रकाशक पण्डित हैं। मुनिजी अपने विषयों के सम्बन्ध में भारतीय स्वाधि के विने जुने विद्वानों में से हैं। इतिहास पुरातत्व साहित्य और दर्शन के क्षेत्र में पापकी वेन बहुमुख्य है। मुनि जी के

बर्नार्डिन और सम्पादन में पुरातत्व मन्दिर ने प्राचीन साहित्य के कई मूल्यवान् ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। अन्य धर्म गुरुओं की तुलना में जैन मुनियों को यह विशेष प्रसिद्धता देनी होगी कि वे साहित्य सृजन और क्षेत्रीय भाषाओं के विकास को अपना दायित्व मानकर बसे हैं। इस दृष्टि से राजस्थानी के क्षेत्र में मुनि जिनविजयजी और मुनि कालिदागरजी की सेवाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

डा० दशरथ शर्मा इतिहास और संस्कृत के विद्वान तथा राजस्थानी के प्रमुख हिमायतियों में से हैं। भारतीय इतिहास साहित्य और संस्कृति प्राचीन हिंदी और राजस्थानी प्राचीन भारतीय धर्म और सम्प्रदाय आपके शोध कार्य के प्रिय विषय रहे हैं। पृथ्वीराज राठो की ऐतिहासिकता के विचार में डा० दशरथ शर्मा ने अपनी नयी मास्यताएँ स्थापित की हैं।

श्री जयवीरसिंह यहलोट ने 'राजस्थानी बातासार्थ' और 'राजस्थानी कृषि कहानियों' के संकलन और प्रकाशन द्वारा प्राप्त क मूलिक साहित्य की सुरक्षा की है।

सर्वश्री मनोहर शर्मा तुलाराम जोशी विद्याधर शास्त्री पुस्तकालय मेनारिया पीलास मिश्र बन्नीप्रसाद शंकरिया राजठ धारस्वठ पतराम गौड़ रानी लक्ष्मीकुमारी बू शबठ मोहनसिंह राज श्रीभाम्पसिंह शोलाबठ नारायणसिंह भाटी क्रोमस कोठारी धीठाराम लालस गीठाराम वर्मा नानूराम संस्कर्ता, उदयवीर शर्मा लक्ष्मीलाल जोशी मोहनलाल पुरोहित धीनदयान भोष्ठा मन्मथानन्द गोस्वामी प्रभु कई साहित्य-संस्कृति प्रेमी लेसक राजस्थानी के प्राचीन-साहित्य और लोक-साहित्य को नवीन संरक्षा में संभारकर प्रस्तुत कर रहे हैं, साथ ही राजस्थानी की नयी सृजन धाराओं पर भी उनकी कसम बसती जाती है।

श्री मनोहर शर्मा ने लोक संस्कृति और लोक-कथाओं के धार पर ही कई सुन्दर काव्यों की रचना की है। लोक-कथाओं के मूल धर्मिधारा पर भी आपने धन्यपणा की है। 'बरदा' के सम्पादक श्री मनोहर शर्मा जितनी धति से, जितने परिमाण में और जितने श्रेष्ठ साहित्य की रचना कर रहे हैं वही धामर्ष्य बिरलों में ही होती है।

रानी लक्ष्मीकुमारी बू शबठ ने भी लोक-कथाओं के धार पर कई बार्ताएँ मनोई हैं और कहानियाँ लिखी हैं।

स्वामी लखतमबास धगरबन्द नाहटा रघुनाथ प्रसाद सिंहाभिया लक्ष्मण धार्य डा० बन्धुयानाथ सहस्र लक्ष्मीलाल जोशी लक्ष्मीलाल मेहता जयवीरसिंह

गहकोट भँवरनाथ माहटा सीताराम सामंत आदि ने अखंड सोक-कहावतों का संग्रह किया है।

सोक-साहित्य विषयक गवेषणापूर्वक और मौलिक निष्पत्तियों के लिये आर्य समाज के अखंड सारस्वत चन्द्रदास चरण मनीहर शर्मा दीडाराम शर्मा डा० स्वर्णलता अडवाक अमोक्तक चन्द नागिड़ तुलाराम बोसी मानूराम चम्पलाल अय्यबहीर शर्मा गोपीबन्धन गोस्वामी, श्रीलाल मिश्र बन्नीप्रसाद साकरिया, गणपति स्वामी स्व हरनारायण पुरोहित मेहताबचन्द्र सारेङ्ग अखंडसिंह शोयस अय्यरचन्द्र माहडा गरीबमदास स्वामी ठाकुर रामसिंह और शीतलदास अमोक्तक तथा इन जैसे कई अन्य लोगों की सेवाएँ भुलाई नहीं जा सकती।

स्व० हरनारायण पुरोहित ने 'बाँकीबास अम्बावती' और अजनिधि अम्बावती का सम्पादन किया है। मेहताबचन्द्र सारेङ्ग ने 'रघुनाथ सोक' की टीका और 'कूर्मवचन मध्य प्रकाश' का सम्पादन किया है।

डा० सिद्धस्वरूप शर्मा अक्षय' ने राजस्थानी मध्य साहित्य का इतिहास और विकास' शोध-निबन्ध पर पी-एच० डी० प्राप्त की है। प्रेमदेव भूषण ने चार भागों में 'सोक-गीतों के संकलन प्रकाशित किये हैं।

श्रीसतमेर शोध के अन्तर्गत कवियों और सत्यों को परिचय में आने का शायद ही शीतलदास अमोक्तक ने निभाया है।

श्री कामल कोठारी गयी पीढ़ी के कुशल समीक्षक हैं।

'मन्साली (राजस्थानी भाषिक) के सम्पादक श्री राजत-सारस्वत को राजस्थानी के अधिकांश गवेषित लेखकों को प्रकाश में आने और उन्हें गवेषित मान्यता दिलाने का श्रेय प्राप्त है। राजतजी राजस्थानी के श्रेष्ठ कवि और समर्थ लेखक के साथ-साथ अनुसन्धानकर्ता और समीक्षक भी हैं। 'मन्साली' के माध्यम से वे शोध की भाषा और साहित्य की बहुमुखी सेवा कर रहे हैं।

श्रीलाल मिश्र राजस्थानी के प्राथमिक समीक्षकों में अपना श्रेष्ठ स्थान बनाते जा रहे हैं। 'प्राथमिक राजस्थानी भाषा' और 'प्राथमिक राजस्थानी काव्य' जैसे शोधों के अन्तर्गत ही मिश्र ने नये और अन्वेषण रचनाकारों की रचनाओं पर समीक्षा प्रस्तुत की है।

श्री पुस्तकालय मेनारिया द्वारा लिखित और सम्पादित निम्न पुस्तकें प्रकाश में आई हैं—१ राजस्थानी की रत्न-बाग (निबन्ध संग्रह) २ राजस्थानी भाषा की रूपरेखा और मान्यता का प्रश्न ३ राजस्थानी सोकगीत। प्राप्त आलोचना के अनुसार ही मेनारिया राजस्थानी का इतिहास लिख रहे हैं।

डा० हरिधर शर्मा 'हरीश' ने प्राचीन साहित्य विवेक-सैन साहित्य पर शोध कार्य किया है। नाट्यशास्त्र पर प्रभुनाथरायण शर्मा राजस्थानी शास्त्र साहित्य पर शोध कार्य कर रहे हैं। श्री भगवानदत्त गोस्वामी ने कवीव एक श्री रामोपयोगी कथाभा का संग्रह किया। श्री अन्नदान चारण ने गोमा-बौहान' लोक-काव्य का ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

पठारम चौक ने डा० ईश्वरदान आशिया और डा० कन्हैयालाल सहस के साथ मिलकर महाकवि सूयमत्स की 'बीर सतसई' का सम्पादन किया है। 'विस्तार' 'मानव और प्रकृति', 'समय गुरु रामदास' और 'राजस्थानी गहारे' आपकी प्रथम पुस्तकें हैं। 'बौबोसी' और 'हरदास बाबनी' के सम्पादन में भी आपने डा० सहस का सहयोग किया है।

प्रो० नरेन्द्रकुमार माणिक्य 'बिम्बि साहित्य' पर शोध कर रहे हैं। डा० स्वर्णलता अग्रवाल ने लोक-साहित्य पर पी-एच० डी० प्राप्त की है।

श्री सौम्यासिंह शेखावत को राजस्थानी के कई अज्ञात कवियों और शोधकों की विपुल जानकारी है जिन्हें वे प्रकाश में लाते जा रहे हैं। आपने साहित्य संस्थान उदयपुर द्वारा प्रकाशित कई पुस्तकों का सम्पादन किया है।

द्विज और विंगल के माध्यम विद्वान श्री मोहनसिंह कविराज ने 'पृथ्वीराज रास' (चार भागों में) तथा कई द्विज भीतों का सम्पादन किया है। राजस्थानी के शोध स्नातकों को राज साहब से बड़ी मदद मिलती है।

राजस्थानी शोधकार्य का विकास तीव्रगति से हो रहा है।

### उत्थान के प्रयत्न

शास्त्रीक-जातिवाद और भवभूति होमर, मेटे और रोमसपियर, बन्दरदाई, पृथ्वीराज, धूर और तुमसी बीरमाण-ईश्वरदास और सुयमत्स जैसी विभूतियाँ भाषा और साहित्य की श्रेष्ठतम उपलब्धियाँ हैं। ऐसी युगांतरकाये प्रतिमाएँ सम्बन्धित भाषाओं के गौरव का बढ़ाती हैं। तुमसी के रामचरित नामस में धबधी की स्थापना कमीभूत हो गई। द्विज कवि रवीन्द्रनाथ टैयार और राय बटोभाष्याय की रचनाओं का पूरा ध्यान देने के लिए लोग बगसा भाषा का अध्ययन करते दखे गये हैं।

साहित्यकार बाणी का उपासक होता है। समाज की अभिव्यक्ति के माध्यम से ही वह नया स्वर और सौन्दर्य भरता है जिसे पाकर बाणी धन्य हो उठती है।



भाषा और साहित्य के उत्पादन में दो प्रकार के योगदान होते हैं। एक तो समर्थ सभ्यताओं का योगदान जिनका सृजन भाषा को प्रतिष्ठा बिलाता है। दूसरा साहित्य सेवियों का योगदान जो नये सृजन और नयी प्रतिभाओं को बढावा देकर अपनी संस्कृति और भाषा की ओर उनकी रुचि आकर्षित करता है। जो भाषा को शास्त्रीय परिधान में सँवारता है और निष्पक्ष तथा संतुलित मूल्यांकन का दायित्व निभाकर सरस्वती सेवकों को उनकी सामर्थ्य के अनुसूचक प्रतिष्ठा देता है।

समर्थ सभ्यताओं के योगदान का बहु प्रसंग नहीं है और प्रस्तुत निबन्ध के सम्बन्धन की सीमा में उसका समाहार भी असम्भव है।

राजस्थानी भाषा और साहित्य के पुनरुद्धार, प्रचार एवं प्रसार की विधा में तथा उसे पुनः एक साहित्यिक भाषा की प्रतिष्ठा बिलाने में जिन व्यक्तियों संस्थाओं और पत्र-पत्रिकाओं का सब एक जो योगदान रहा है उसकी संक्षिप्त चर्चा यहाँ की जा रही है।

असम्भव इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि भारत में राष्ट्रीय चेतना के विकास के साथ-साथ बड़ी बड़ी की राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने की मांग बलवती हो उठी और राजस्थान के साहित्यकार भी हिन्दी की ओर अधिक रुचि में।

राजस्थानी भाषा के समर्थकों पर कभी-कभी यह आरोप लगाया जाता है कि वे राजस्थानी की ओर उन्मुख होकर राष्ट्र भाषा हिन्दी की मान्यता को बर्का पहुँचा रहे हैं। इस प्रकार का बलवन्त किसी अनुचित मस्तिष्क की उपज नहीं हो सकती। राजस्थानी की पूर्ण परम्परा का इतिहास इस बात का साक्ष्य है कि हिन्दी को मात्र राजस्थानी से ही नहीं भारत की हर लोक भाषा से बल मिलता रहा है। अतः बल और राजस्थानी के क्षेत्रों में अन्तः प्रसंगी दूर और अन्तःसंबन्ध की सेवाओं को नहीं मुनासा जा सकता। राष्ट्रीय मान्यता के प्रसार काम में जिन सरस्वती उपासकों ने हिन्दी सेवा के नाम पर अपने संस्कारों की भाषा का भी मोह त्याग दिया हिन्दी के विकास में उनके इस योगदान को किसी भी स्थिति में नहीं मुनासा जा सकता।

वर्तमान स्थिति में भी राजस्थान-अन्य राज्यों के भाषाई आन्दोलनों से बिलकुल विपरीत स्थिति में है। यहाँ राजस्थानी और हिन्दी दोनों भाषाओं का विकास समानांतर गति से हो रहा है। साम्य की उपर्युक्त दोनों भाषाएँ समानांतर गति से अपना विकास कर रही हैं और दोनों भाषाओं को एक दूसरे से पर्याप्त बल और प्रोत्साहन मिला है। साथ ही इतना भी स्पष्ट

है कि राजस्थान में हिन्दी और राजस्थानी दोनों भाषाओं के उपासकों का संघ भी एक ही है, इसलिए राजस्थानी के उपासकों पर उपयुक्त धारोप कि वे हिन्दी के विरोधी हैं, उनकी सेवाओं के प्रति भ्रम्याय है।

## व्यक्तियों का योगदान

राजस्थानी के पुनर्प्रतिष्ठापक स्व० रामकृष्ण घासोपा ने हिन्दी और राजस्थानी दोनों की अविस्मरणीय सेवा की है। श्री घासोपा नये युग के सबसे पहले व्यक्ति है जिन्होंने राजस्थानी प्रचार प्रसार का बीड़ा उठाया। राजस्थानी को एक साहित्यिक भाषा की प्रतिष्ठा दिमाने के लिए आपने बहु प्रयत्न किये यथा १ अनुपमस्य और विमुष्ट साहित्य की शोध एवं संग्रह २ लोक साहित्य का संकलन ३ प्राचीन साहित्य और लोक साहित्य का मूल्यांकन एवं सम्पादन ४ राजस्थान के लेखकों में राजस्थानी की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति का जगाना ५ बोसवास और व्यवहार में राजस्थानी का उपयोग ६ विंगस कोप और राजस्थानी व्याकरण का निर्माण ७ श्रेष्ठ साहित्य का अनुवाद ८ भारतीय और विदेशी अनुसंधान कर्त्ताओं एवं छात्रों को राजस्थानी का शिक्षण आदि आदि।

स्व० रामकृष्ण घासोपा के समय में ही सौमन्य से डा० टेसीटोरी जैसे विद्वानों की मातृ भाषा हुई और उन्होंने राजस्थानी भाषा और साहित्य की कृषि का प्रतिष्ठा की फलत अंग्रेजी व अन्य भाषाओं के विद्वान भी राजस्थानी की ओर आकर्षित हुए।

डा प्रियसत डा० टेसीटोरी एमेन आदि पाश्चात्य विद्वानों का योगदान सुर्य है।

श्री विजयचन्द्र भरतिया को राजस्थानी का भारतेन्दु कहा जाता है। भरतियाजी ने साकोपवागी ग्रन्थों को सरस भाषा में लिखकर राजस्थानी को लोकप्रिय बनाया। एक सफल नाटककार के रूप में भी आपने राजस्थानी के विकास में योग दिया। उनका सिले केसर विभास 'फाटका जवान' और 'बुझाया की सगाई' नाटक काफ़ी लोकप्रिय हुए और लोगो ने यह स्वीकार किया कि राजस्थानी में भी श्रेष्ठ साहित्य की रचना सम्भव है। श्री भरतियाजी का जन्म सं० १९१० में बीहवाछा में हुआ लेकिन बाद में आप ईररावार के कन्नड़ गाँव में आ बस। संस्कृत हिन्दी मराठी और राजस्थानी भाषाओं के ज्ञाता तथा वर्तन के विद्वान श्री भरतियाजी सं० १९७५ में परलोक गये हुए।

भाषने राजस्थानी में २, संस्कृति में ३ मराठी में १३ और हिन्दी में १७ रूपों की रचना की। उल्लिखित नाटक के अतिरिक्त उनकी कुछ रचनाएँ ये हैं—

१ कनक सुन्दर (राजस्थानी का प्रथम उपन्यास) २ मोतिया की कंठी ३ वैद्य प्रबोध ४ विज्ञान प्रवासी ५ संनीत मानहुँवर नाटक ६ बोक वर्षण।

भाषकी भाषा में सफाई और सादगी तथा विचारों में स्पष्टता मिलती है।

राजस्थानी के उस्ताड़ी लेखक श्री गुलाबचन्द माथीरी और श्री सोमाचन्द्र बम्मड़ राजस्थानी के विकास में निरन्तर योग देते रहे। श्री बम्मड़ के सम्बन्ध में उनका निम्न वक्तव्य पृष्ठम्ब है—

‘यदि हम भाष से यह प्रतिज्ञा कर लें कि जैसे श्री होना अपनी मातृभाषा को उन्नत बनाकर सार्वभौमिकी की विभ्य हमारे काम में बाधा नहीं डाल सकता। स्मरण रहे—जब तक हम अपनी मातृभाषा को उन्नत नहीं बनाएँगे तब तक हमारी उन्नति की यदि सम्भरती रहेगी।

इसी भावना से प्रेरित होकर श्री बम्मड़ ने राजस्थानी में कई नाटक लिखे जिन्हें अनेक स्थानों पर सफलता पूर्वक खेला गया।

श्री रामदेव चौधारी जिनका स्वर्णवास २० जून १८५० को ५० वर्ष की आयु में हुआ थाजीवन राजस्थानी भाषा की सेवा करते रहे। वे राजस्थानी को प्राप्त भाषा का स्वल्प दिनमाने के प्रबल हिमामयी रहे। बीकानेर के साहूजी रिचर्ड इन्स्टीट्यूट व राजस्थानी की कई अग्र प्रवृत्तियों से उनका सीधा सम्पर्क रहा। कलकत्ते का मारवाड़ी समाज उन्हें इन सेवाओं के लिए अभिनन्दन पत्र भेंट करने वाला था लेकिन उन्हे पूर्व ही वे स्वर्णवासी हो गये।

हजूरतिया ग्राम के श्री बालाचन्द्र चारण (सं १९१२-१९५५) ने काशी जानसे प्रचारिणी समाज की सात हजार रुपये का दान देकर बालाचन्द्र राजपूत चारण पुस्तक मासा फण्ड’ स्थापित किया जिससे राजपूत चारणों द्वारा लिखित कई ग्रन्थ प्रकाश में आये।

श्री चक्रवर्त चम्बल, ठाकुर रामसिंह मरोतमदास स्वामी और चक्रवर्त नाहुटा पठ कई वर्षों से राजस्थानी के विकास में भरपूर योग दे रहे हैं जिनकी सेवाओं की चर्चा ग्रन्थ की भाषा में की है। श्री राजत चारणवत राजी लक्ष्मीकुमारी श्री राजत डा. कन्हैयालाल सहस्र मनोहर शर्मा, श्रीप्रसाद

छोटीसा चन्द्रसिंह मुरसीपर व्यास छीताराम धादि राजस्थानी के कई निगानो के अपने कई-कई सेखों में राजस्थानी भाषा और साहित्य की उत्कृष्ट रसम्भियों का परिचय दिया है।

श्री हीनबयाल घोषा गीताराम बर्मा तुलाराम बोधी प्रसन्नचन्द्र धर्मा धारि ने राजस्थानी-लोक-साहित्य पर सेख सिखे जिससे साहित्य की परम्परा में जो बल मिला ही साथ ही नये सृजन को भी प्रेरणा प्राप्त हुई।

यहाँ श्री सुनीलकुमार चाटुर्जा भगरचन्द्र माहटा रामदेव चौधारी वीरचमण स्वामी ठा० रामसिंह हरिचन्द्र और भगमसिंह खेन्नाबठ ने साहित्यिक और सार्वजनिक मंचों पर राजस्थानी अभिव्यक्ति में ही कई वाक्य लिखे।

इतिहासज्ञ श्री महाधरमस धर्मा महाराजकुमार डा० रघुबीरसिंह और डा० बजरंग धर्मा ने राजस्थानी संस्कृति और साहित्य के गौरवपूर्ण अतीत का प्रस्तावना किया है। प्राथमिक राजस्थानी साहित्य रचना के क्षेत्र में जितने नये लेखकों की जहाँ की गई है समय के सभी राजस्थानी के प्रचार प्रसार के प्रति अपना वाचित्त्व निभा रहे हैं। कुछ अपनी रचनाओं से कुछ साहित्यिक संस्थाओं के माध्यम से और कुछ साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से सेवा कर रहे हैं।

## पत्र-पत्रिकाओं का योगदान

राजस्थान में तथा प्रवासी राजस्थानियों के सहयोग से तथा राजस्थान के बाहर भी समय समय पर प्रकाशित कई पत्र-पत्रिकाओं ने राजस्थानी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योग दिया है।

बामण साह की संस्था ने 'मारवाड़ी हितकारक' पत्र निकाला। समय-समय पर विलो विल्डी से 'मारवाड़ी मित्र' निकला लेकिन अनेक समस्याओं से पुरक कर के पत्र अधिक समय तक नहीं टिक सके। नियमित और सम्बन्ध प्रकाशन की दृष्टि से 'चारण' का योगदान उल्लेखनीय है। इस पत्र में चारण जाति के कई श्रेष्ठ कवियों और साहित्यकारों के व्यक्तित्व और हितत्व पर प्रकाश डाला गया है। ठाकुर ईश्वरदान धाधिया भैंवर दुमकण्ठ कविया तथा किमोरसिंह चौदा ने सम्पादकों के रूप में चारण का अपनी सेवाएँ दीं। इसी संस्थान में मुम्बई चारण पत्रकार समर्थदान की सेवाएँ भी उल्लेखनीय हैं। 'चारण' अखिल भारतीय चारण सम्मेलन का प्रकाशन है।

वशिष्ठ भाख (पूजा) से प्रकाशित 'राजस्थानी बीर' का प्रकाशन भी

यह प्रमाणित करता है कि भारत के सभी क्षेत्रों में यथा माध्य राजस्थानी के प्रचार में योग दिया है।

श्री कचरदास कलंत्री ने 'पञ्चरात्र' नाम से राजस्थानी का हास्परस प्रदान पत्र निकामा सेकिम यह भी अधिक समय तक नहीं चल सका।

राजस्थानी के उपासक श्री बबलारयण श्याम ने 'भागीबाखु' पत्र का प्रकाशन किया था जिसने जब तक भी यह प्रकाशित हुआ प्रतिनिधि राजस्थानी लेखकों की रचनाएँ प्रकाशित की और राजस्थानी के भ्रात्रोत्थन में योग दिया।

राजस्थान रिजर्व सोसाइटी बलकृता ने 'राजस्थान' निकाला। स्व० सूर्यकरण पाटीक ने भी 'राजस्थानी' नाम से पत्र निकाला और उसके माध्यम से राजस्थानी के पाठको तक अपने विचारों को पहुँचाया।

राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'राजस्थान साहित्य' निकाला सेकिम यह भी असमय में ही ठप्प हो गया।

घास से लगभग ८ वर्ष पूर्व जयपुर से एक राजस्थानी दैनिक का प्रकाशन भी होने लगा था जिसका नाम 'जापती जोत' था। यह 'जोत' पूरी तरह जाय भी नहीं पाई कि कुछ वर्ष।

साहित्य संस्थान के घोष विभाग का प्रकाशन 'भोज-पत्रिका' (त्रैमासिक) गत ११ वर्षों से प्रकाशित हो रही है। यह पत्रिका राजस्थान के इतिहास पुरातत्व साहित्य और संस्कृति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण अपेक्षात्मक सामग्री प्रस्तुत करती है। महाराजकुमार डा. रघुबीरसिंह, भगवन्त नाहुटा नरोत्तमदास स्वामी और डा. मोतीलाल भनारिया जैसे विद्वानों का सहयोग इस पत्रिका को प्राप्त है।

साहूभू रिजर्व इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित 'राजस्थान भारती' और बिड़ला एन्वूकेशन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'रूकू भारती'—दोनों त्रैमासिक पत्रिकाएँ हैं। प्राचीन-साहित्य लोक-साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र की महत्वपूर्ण जानकारी इन पत्रिकाओं से प्राप्त होती है। राजस्थान भारती अपेक्षाकृत वार्षिक नियमित है और उसने राजस्थानी के समर्थ एवं नये लेखकों की रचनाओं को प्रकाशित करके साधुनिक साहित्य के लिए भी बहुत कुछ किया है। सर्वश्री बन्नीप्रसाद साकरिया विद्यावर सास्त्री भगवन्त नाहुटा नरोत्तमदास स्वामी और डा. कन्हैयालाल शूभ ने इन पत्रिकाओं को अपनी सेवाएँ प्रदान की हैं।

गोप-संस्थान, श्रीपासनी द्वारा प्रकाशित 'परम्परा' विशेष उत्प्रेक्षणीय है। उनके कुछ विशेषांकों (मोरा हटबा बिगम कोप-बाध साहित्य आदि) ने भी बारी स्थापित प्रकृत की है। प्राधुनिकतम श्रीमती छपाई और गेटप्रप बहुमुख्य नामकी—श्रीमती बुधियाँ से 'परम्परा' अपने डग की निरांगी ही गोप-पत्रिका है। बरंभी नारायणसिंह भाटी सीतागम नामक कोमल कोठारी और बिजयदान सेवा की सेवाएँ 'परम्परा' को प्राप्त हैं।

बिसाठ से प्रकाशित और श्री मनोहर शर्मा द्वारा सम्पादित 'बरबा' (त्रैमासिक) प्राचीन और प्राधुनिक साहित्य तथा लोक-साहित्य सम्बन्धी बहुमुख्य सामग्री प्रकाशित करती है। साथ ही राजस्थानी के लेखकों की प्रतिनिधि रचनाओं का भी प्रकाशन करती है। श्री मनोहर शर्मा के अधिकांश लेख और काव्य 'वरदा' में ही प्रकाशित हुए हैं।

डूडभोद हाई स्कूल की पत्रिका 'सामना' के स्पष्टतः दो भाग हैं। एक भाग में राजस्थानी के प्रतिनिधि लेखकों की रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। दूसरे भाग में छात्रों की स्वरचित रचनाएँ होती हैं। पत्रिका के प्रधान सम्पादन सामान्य मिश्र है। नये लेखकों को राजस्थानी-साहित्य की ओर उन्मुख करने का यह प्रयास प्रशंसनीय है।

उपर्युक्त सभी पत्रिकाएँ हिन्दी में प्रकाशित होती हैं। लेकिन उनका सम्बन्ध राजस्थानी-साहित्य से ही है। प्रसंगों के अनुसार उनमें राजस्थानी का कलेवर भी पर्याप्त मात्रा में होता है।

'मल्हाणी मासिक राजस्थान भाषा प्रचार सभा का मासिक प्रकाशन है जिसकी भाषा राजस्थानी है और सम्पादक राजस्थानी के परम उपासक श्री राबत धारस्वत हैं। राजस्थानी अभिव्यक्ति में प्रकाशित होनेवासी यह एक मात्र मासिक पत्रिका है जो गठ कई वर्षों से प्राधुनिक राजस्थानी-साहित्य के प्रकाशन में अपनी अत्यन्त सेवाएँ प्रदान कर रही है। उत्प्रेक्षणीय है कि प्रगत विद्यार्थी के लेखकों को अपने उपमांग की अधिकांश सामग्री इसी पत्रिका से प्राप्त हुई है।

क्षेत्रीय संघीयताओं ने पुष्पक रूढ़कर और भाषागत माय्यताओं में प्राथमिक उदार बनी रहकर 'मल्हाणी' ने सम्पूर्ण प्रांत के राजस्थानी लेखकों को रचनाओं को सम्मान दिया है और उन्हें पत्राचित माय्यता प्रदान की है।

रत्नगढ़ से प्रकाशित दो पत्र 'घोड़मो' और 'कुरजा' राजस्थानी भाषा में ही प्रकाशित होते हैं और राजस्थान के नये सुजन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन दोनों पत्रों का प्रकाशन गया-जया है। श्री 'कितोरकस्थाना कांत घोड़मो' के और श्री 'अक्षुभूत दास्त्री कुरजा' के सम्पादक हैं।

'संघर्षकित' जयपुर, 'वीरनगीत' बनारसी 'शाश्वर्य' अजमेर 'संघर्ष' जयपुर, 'अश्वि वीर' धीर 'रुमलेन' जोधपुर ने भी इस विकास में योगदान किया है।

दस भर की कई अन्य पत्र-पत्रिकाएँ भी राजस्थानी साहित्य विषयक लेख प्रकाशित करती हैं यथा १ नागरी प्रचारिणी पत्रिका २ कल्पना ३ अमरा ४ सारस्वती ५ लहर आदि। राजस्थान की कई अन्य पत्रिकाएँ भी इस क्षेत्र में अपना योगदान करती हैं, जैसे 'अमर ज्योति' साप्ताहिक धीर 'प्रेरणा' मासिक। 'अमरज्योति' के सम्पादक श्री नारायण जतुबेरी धीर 'प्रेरणा' के सम्पादक श्री बैजनायण व्यास हैं।

राजस्थान साहित्य प्रकाशनी द्वारा हाल ही में 'मधुमती' वैयाखिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया है जिसके सम्पादक राजस्थानी भाषा धीर साहित्य के विद्वान डा० मोतीलाल मजारीवा हैं। 'मधुमती' में हिन्दी के शाल-शाल राजस्थानी की रचनाओं को भी प्रकाशित किया जाता है।

पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से राजस्थानी-साहित्य का व्यापक प्रचार हुआ है उसके लेखकों की संख्या बढ़ी है धीर उसका सास्त्रीय एवं समीक्षामय पक्ष भी सुदृढ़ हुआ है।

### संस्थानों का योगदान

१. मारवाड़ी भाषा प्रचारकः—राजस्थानी भाषा के प्रचार प्रसार में किन्हीं नये प्रारम्भिक प्रयत्नों में धामरुगाथ (बराड़) की संस्था 'मारवाड़ी भाषा प्रचारक मण्डल' ने भी अपना भारी योग दिया है। उक्त संस्था ने राजस्थानी में लिखे कई नाटक अभिनीत किये राजस्थानी से सम्बन्धित कई पुस्तकें प्रकाशित की हैं।

२. राजस्थानी साहित्य परिषद् — राजस्थान साहित्य परिषद् बीकानेर ने भी राजस्थानी के प्रचार का बीड़ा उठाया। पिलानी से श्री 'राजस्थानी ग्रन्थ माघा' के अन्तर्गत दो पुस्तकें प्रकाशित हुईं।

३. साहित्य संस्थान— साहित्य संस्थान' जयपुर अगस्त १९३७ में स्थापित हुई संस्था है, जो राजस्थान में नव-उदय विद्यते साहित्य की शोध खोज संघर्ष, संस्थाएँ सम्पादन एवं प्रकाशन का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। राजस्थानी साहित्य संस्कृति धीर इतिहास के क्षेत्र में साहित्य संस्थान का भारी योगदान रहा है। राजस्थानी साहित्य को न उससे सम्बन्धित छोटी-बड़ी लगभग ३३ पुस्तकें संस्थान ने अब तक प्रकाशित की हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं —

- १ पृथ्वीराज रासो (सम्पादित)—चार भाग
- २ पृथ्वीराज रासो की विवेचना
- ३ राजस्थानी काली—७ भाग
- ४ प्राचीन राजस्थानी मीठ—१२ भाग
- ५ राजस्थानी मीठ-साहित्य—३ भाग
- ६ राजस्थानी लोक-गीत—६ भाग
- ७ राजस्थानी माया—डा० सुनीलकुमार चादुरिया
- ८ लोक-साहित्य एवं प्राचीन साहित्य की विवेचना की दो पुस्तकें (मुद्रणाधीन)
- ९ अन्य कई ।

साहित्य संस्थान के अन्तर्गत महाकवि सूर्यमस्त धाराधन की स्थापना की गई है, जिसके अन्तर्गत राजस्थानी-साहित्य पर भाषण-भाषाओं का आयोजन किया जाता है। सर्वेभूषण जगदीशचन्द्र नायर मरुतमदास स्वामी डा० मोती लाल मेनारिया धनरत्न नाहटा सौभाग्यसिंह खेखाबत कविराज मोहनसिंह, सर्वसदान धाधिया इतिहासज्ञ नाथूसाल भायीरय व्यास तथा कृष्णचन्द्र धास्त्री की सेवाएँ इस संस्था को प्राप्त हैं।

संस्थान प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों पढ़ी-पढ़ानों की काज क लिये प्रयत्नशील है और 'राजस्थान में प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज' नाम से चार पुस्तकें प्रकाशित कर चुका है। इनसे राजस्थानी के शोध-कर्ताओं को बड़ी सहायता मिली है।

४ हिन्दी विश्व भारती—बीकानेर की संस्था हिन्दी विश्व भारती साहित्य-सेवा के क्षेत्र में संस्थापु में ही काफी प्रतिष्ठा अर्जित कर चुकी है। यह संस्था हिन्दी, संस्कृत और राजस्थानी-सीनों भाषाओं के साहित्यकारों को संगठित करने तथा उनकी रचनाओं के प्रकाशन की दिशा में निरन्तर प्रयत्नशील है। बीकानेर की साहित्यिक और सांस्कृतिक हलचलों में इसका प्रमुख योगदान है। संस्था का अनुसंधान विभाग इन दिनों राजस्थानी संस्कृत-साहित्य, राजस्थानी कविधर्मियों एवं राजस्थानी लोकोत्सवों पर विशेष कार्य कर रहा है। सर्वेभूषण विद्याधर धास्त्री पुष्करबल गर्मा गौरीशंकर धास्त्री, भयवानवल गोस्वामी और दीनबयाल घोषा की सेवाएँ संस्था को प्राप्त हैं।

बीकानेर की दो और संस्थाएँ १ भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान और २ छात्ररूढ़ राजस्थानी लिटरेचर इन्स्टीट्यूट—राजस्थानी-साहित्य के विकास में निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

५ भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान— भारतीय विद्या मन्दिर शोध



प्रतिष्ठान' प्राचीन ग्रन्थों की शोध लोक-साहित्य का संग्रह राजस्थान की लोक-कथा एवं लोक-संस्कृति समाज एवं संस्कृति लोक-परम्पराओं पुरातत्व प इतिहास भाषा के विविध क्षेत्रों में शोध-कार्य कर रहा है। सन् १९२७ स्थापित इस संस्था के पास ८ महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशनार्थ तैयार हैं। गत ३ मासे संस्था ने लगभग ३२० हस्तलिखित ग्रन्थों एक हजार से अधिक साक-गीतों मँकड़ों लोक-वार्ताओं भाषा का संग्रह किया है। प्राण जानकारी के अनुसार संस्था इस समय बिजनेस सम्प्रदाय धनशिया सम्प्रदाय राजस्थानी महाभारत एक लोक-काव्य भारतीय वाङ्मय को बीकानेर की रैन राजस्थानी लोकगीतों एवं लोक-वार्ताओं पर कार्य कर रही है।

सर्वेपी नरोत्तमदास स्वामी फ्रांस्वुल गोस्वामी चम्पूदयाल सक्सेना जमनाल चारुल नापूराम लखनवत प्रदायचन्द्र वर्मा मुखचन्द्र पारीक धारि व्यक्तियों की सेवाएँ इस संस्था को प्राप्त हैं।

६ सानुजु राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट—मह संस्था सन् १९४४ स्थापित हुई। इसके उद्देश्योत्तम में हिन्दी के विद्यालय धन्वकोय तथा 'राजस्थानी मुद्राकार कोय' का सम्बन्ध है। लगभग ३ लाख राजस्थानी ग्रन्थों का प्राथमिक डब पर सम्भारण किया जा रहा है।

इन्स्टीट्यूट के अन्तर्गत निम्न ५ विभाग गठित हैं —

- १ संस्कृत और भारतीय संस्कृति विभाग।
- २ कथा और उपहास्य विभाग।
- ३ मुक्त पत्रिका विभाग।
- ४ राजस्थानी साहित्य विभाग।
- ५ लोक साहित्य व पुस्तकालय विभाग।

संस्था ने राजस्थानी की निम्न तीन पुस्तकें प्रकाशित की हैं —

१ कदावण (बहु काव्य) २ बरस गाठ (कहानी संग्रह) ३ भाग्य मटकरी (उपन्यास)।

प्राण जानकारी के अनुसार संस्था के पास १५-२० पुस्तकें तैयार हैं जो प्रकाशित हो रही हैं।

७ साहित्य समिति बिसाह—राजस्थान साहित्य समिति बिसाह प्रकाशित राजस्थानी साहित्य के पुनर्गठन एवं नये कृषक की श्रीमूर्ति में योग्य है रही है। समिति ने राजस्थानी साहित्य और संस्कृति से सम्बन्धित निम्न पुस्तकें प्रकाशित की हैं—

१ राजस्थानी वीथों में रामकृपा २ राजस्थानी लोक संस्कृति श्री जयपुर  
३ रससिद्ध रामनाथ कविता ४ सर्वांगीण राजस्थानी काव्य ५ स्वमयी संयम ।

सर्वश्री प० श्रीवास मिश्र मनोहर शर्मा डा० कन्हैयासाह सहाय तुमाराम  
जोगी उदयवीर शर्मा गीताराम शर्मा श्रीर मनोहर शर्मा की सहाय इस संस्था  
को प्राप्त है ।

८ राजस्थान भाषा प्रचार समिति — राजस्थान भाषा प्रचार समिति  
जयपुर, का उद्देश्य राजस्थान की भाषा साहित्य कला और संस्कृति की रक्षा  
एवं विस्तार है । लोक-साहित्य एवं प्राचीन साहित्य का संग्रह एवं प्रकाशन  
राजस्थानी भाषा की परीक्षाओं एवं अध्ययन केन्द्र का सम्भालन तथा 'मरवाणी'  
मासिक का प्रकाशन इसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं । राजस्थानी-साहित्य के प्रचार  
प्रसार एवं विकास में अत्यधिक सम्मान के साथ उल्लेखनीय योगदान देने वाली  
इस संस्था मठ १९५३ में स्थापित हुई थी ।

संस्था में दोहापदाटी क्षेत्र क १००० लोक-गीतों का संग्रह किया कई गीतों  
की स्वर लिपियाँ तैयार करके उनका लोक-सङ्गीत को सुरक्षित किया २५०  
लोक-कथाओं का संग्रह किया १०० से अधिक हस्तलिखित ग्रन्थों का पढ़ा  
समाया और अब १ ग्रन्थों का सम्पादन कार्य चल रहा है जिनमें निम्न ६  
ग्रन्थ प्रकाशन के लिए तैयार हैं —

१ दलपत विभास २ महादेव पारवती की कविता ३ अम्बायन ४ विपिन  
गीत ५ राजस्थानी वाता ६ राजस्थानी कविता कौमुदी ।

इस संस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य राजस्थानी की परीक्षाओं का  
सम्भालन करना है । प्रिन्सहास राजस्थानी साहित्य की तीन परिष्कारें प्रारम्भ  
की हैं, जिनमें पहले वर्ष ही संकड़ों परीक्षाओं बीटे हैं । संस्था प्रयत्नशील है कि  
राजस्थानी जयपुर में एक सर्वांगीण राजस्थानी अध्ययन केन्द्र बन सके ।

संस्था को सर्वश्री रावल सारस्वत तुमाराम श्याम देवीसिंह मंडावा  
चन्द्रसिंह रानी सरमीकुमारी चू डायल आदि का सहयोग प्राप्त है ।

९ शोध संस्थान जोधपुर — 'राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर'  
राजस्थानी साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र में शोध कार्य संग्रहण एवं प्रकाशन के  
कार्य कर रही है । प्राचीन साहित्य लोक-साहित्य लिखकता इतिहास तथा  
पुरातत्व सम्बन्धी विपुल सामग्री का पुनरुद्धार इस संस्था में किया है । शोध  
संस्थान की तबोल प्रमुख प्रवृत्ति 'राजस्थानी शोध' का सम्पादन और प्रकाशन  
है, जिसका प्रमुख श्रेय भी गीताराम साहस को है ।

संघ संरक्षक श्री विजयसिंहजी श्रीरामसिंहजी सेवकता मारयणसिंह भाटी, कोमस कोठारी एवं विजयवान वैशा प्रायि की सेवाएँ इस संस्था को प्राप्त हैं ।

१० कुमार साहित्य परिषद्—बोबपुर की अन्तर्प्रान्तीय कुमार साहित्य परिषद् बोधिसौं विचार समाजा परिसंवाव सम्मेलना भाषण मासाधौ सांस्कृतिक प्रदर्शनो एव साहित्यिक मैत्रो प्राणि क विविध आयोजन करती है । प्राठ की गई पीढ़ी को साहित्यिक-सांस्कृतिक एव शैक्षणिक आधार पर आसक्त करने की विद्या में सत्ता का भाटी योगदान है ।

सर्वभौ डा देवराम उपाध्याय मैमिचन्द्र बीन भाबुक' मरुपतिचन्द्र मध्वारी प्रायि की सेवाएँ इस संस्था को प्राप्त हैं ।

### राज्य सरकार के प्रयास

राजस्थान साहित्य अकादमी राजस्थान राष्ट्रीय नाटक अकादमी और राजस्थान सलित कला अकादमी की स्थापना करके राज्य सरकार ने राजस्थान के साहित्य कला और संस्कृति के क्षेत्र में गह-वेतना की महुर कँसाई है ।

### राजस्थान-साहित्य-अकादमी

राजस्थान साहित्य अकादमी हिन्दी राजस्थानी ठहूँ व संस्कृत सभी भाषाओं में रचित-साहित्य और राजस्थान के साहित्यकारों की पुस्तकों के प्रकाशन साहित्य-पुरस्कार, साहित्यकारों को प्रायिक अनुदान साहित्य-बोधिसौं के आयोजन प्रायि कार्य करती है ।

अकादमी के अंतर्गत राजस्थानी साहित्य का पुस्तक विभाग है, जिसके अंतर्गत कार्य प्रगति की पहली क्रिस्त के रूप में राजस्थानी की निम्न पुस्तकें प्रकाशित की जा रही हैं ।

- १ अठ पचास वर्षों में रचित— प्रतिनिधि काव्य-संग्रह'
- २ अठ पचास वर्षों में रचित— प्रतिनिधि कहानी-संग्रह'
- ३ अठ पचास वर्षों में रचित—'प्रतिनिधि निबन्ध-संग्रह'
- ४ अठ पचास वर्षों में रचित—'प्रतिनिधि एकांकी-संग्रह'
- ५ रबीन्द्र के कुछ प्रतिनिधि पीठों का राजस्थानी अनुवाद
- ६ रबीन्द्र कुछ पीठांशक्ति का राजस्थानी अनुवाद
- ७ रबीन्द्र साहित्य के अन्व प्रकाशन ।

राज्य सरकार का वृद्ध उल्लेखनीय योगदान बोबपुर के 'प्राथम्य विद्या प्रतिष्ठान' को है, हजार रुपया प्रायिक अनुदान देना है, जो राजस्थानी के प्राचीन साहित्य के संग्रहण सम्पादन तथा प्रकाशन के निमित्त है ।

## उपसंहार

किसी भी विषय का उपसंहार सिद्ध देने का साहस उस स्थिति में हो सकता है, जब उस विषय को अपनी बार्ता के कसेबरे में सम्पूर्णरूप से समाहित कर लिया गया हो। 'धार्मिक राजस्थानी साहित्य' के प्रस्तुत विवेचन को इस दृष्टि से पूर्ण नहीं कहा जा सकता। धार्मिक साहित्य की विभिन्न विधाओं और उनके विविध प्रसंगों को एक सीमित कसेबरे में बाँध पाना सामर्थ्यवान् लेखकों का ही काम है साहित्य के सामान्य से विद्यार्थी का नहीं।

इतना धरम्य है कि अपनी सामर्थ्य के अनुकूल विषय की मर्यादा को समझने और उसे सिद्ध पाने में पूरा-पूरा ईमानदार रहने का प्रयत्न धरम्य किया गया है।

जो कुछ भी सिद्धा गया है वह धार्मिक राजस्थानी साहित्य का परिचय मात्र ही कहा जा सकता है और परिचय भी पूरा-पूरा मिल पाया है या नहीं इसमें संदेह करने की काफ़ी गुंजाइश है। कम से कम इस रूप में इस प्रयास को धरम्य स्वीकार किया जाना चाहिये कि साहित्य की धार्मिक प्रकृतियों की यत्र-यत्र बिलखी हुई जानकारी को एक स्थान पर एकत्रित करने की चेष्टा की गई है जो राजस्थानी साहित्य के इतिहास लेखकों के लिये किसी न किसी रूप में धरम्य ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

## सहायक पुस्तक सूची

### (क) शोध एवं आलोचना

१ बोला माऊ ए बोहा	(सम्पादकीय)
२ बांकीबास इबाबली	(सम्पादकीय)
३ राजस्थानी साहित्य (एक परिचय)	श्री नरोत्तम दास स्वामी
४ राजस्थानी भाषा और साहित्य	डा० मोठीसाल मेनारिया
५ राजस्थानी भाषा	डा० सुनीति कुमार चाटुर्मा
६ राठोड़ रचनसिंहजीरी बचनिका	सम्पादक-काशीराम शर्मा डा० रघुवीरसिंह
७ राजस्थानी बच-साहित्य का विकास (शोध निबन्ध)	डा० सिवस्वरूप शर्मा 'अक्षय'
८ राजस्थानी भाषा और साहित्य	श्री नरोत्तमदास स्वामी
९ राजस्थानी साहित्य की समीक्षा	श्री नरोत्तमदास स्वामी
१० वैमि क्विचन ककमणी री	(सम्पादकीय)
११ हिन्दी साहित्य कुछ विचार	डा० प्रेमनाथपन टन्डन
१२ हिन्दी नाटक उद्भव और विकास	डा० बघरथ धोम्य
१३ हिन्दी साहित्य का धारिकाल	डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
१४ सन् ३७ की राज्य चान्ति	डा० रामबिलास शर्मा

### (ख) धुजन

१५ अमर काव्य	अमर बाग
१६ कछमय्य	नानुराम संस्कर्ता
१७ प्योही	नानुराम संस्कर्ता
१८ भैरावणी ए नू पटया	बाबूठ केसरीसिंह
१९ बागती बीता	गिरबारीनिह पड़िहार
२० प्रताप प्रबन्धि	डा० रसवीरसिंह
२१ प्रणवीर प्रताप	गिरबारीसाल धास्वी
२२ बाबली	बग्गसिंह
२३ माया सतक	बदय राव उज्ज्वल
२४ बसदेव	नानुराम संस्कर्ता
२५ पुर्पाबास	नारायणसिंह भाटी
२६ बोलाबस	एन० सूर्य करण पाटीक
२७ मटो लो कहो मठ	डा० कन्हैयालाल शर्मा

- २८ राजस्थानी सूक्त  
 २९ मू  
 ३० बीर सठसई  
 ३१ बीर सठसई  
 ३२ बीर पूजा सठसई  
 ३३ बघ भास्कर  
 ३४ साम्भ  
 ३५ स्वराज बाबनी

- मनोहर शर्मा मंजुस  
 पम्प्रसिंह  
 सूर्यमस्त  
 नाबूदान महिमारिया  
 राजस गरेन्द्रसिंह  
 सूर्यमस्त  
 गायमणसिंह माटी  
 तेज कवि

(ग) पत्र-पत्रिकाएँ

- |                     |             |
|---------------------|-------------|
| १ अजन्ता            | (मासिक)     |
| २ अमर क्मोति        | (साप्ताहिक) |
| ३ ओज्जमो            |             |
| ४ कल्पना            | (मासिक)     |
| ५ कुरजा             |             |
| ६ चारण              |             |
| ७ परम्परा           | (त्रैमासिक) |
| ८ प्रेरणा           | (मासिक)     |
| ९ मरुवाणी           | (मासिक)     |
| १० मधुमती           | (त्रैमासिक) |
| ११ मरुभारती         | (त्रैमासिक) |
| १२ राजस्वाम         |             |
| १३ राजस्वाम साहित्य |             |
| १४ राजस्वाम भारती   | (त्रैमासिक) |
| १५ वरदा             | (त्रैमासिक) |
| १६ विद्यास राजस्वाम | (साप्ताहिक) |
| १७ सोभ पत्रिका      | (त्रैमासिक) |
| १८ सरस्वती          | (मासिक)     |
| १९ संघ चर्चित       | (मासिक)     |
| २० साधना            |             |
| २१ मासिक संदेश      | (मासिक)     |

(घ) शेर

- १ रामदयाल कविमा बीर रामदयाल बघ सराज—शानाम्प्रसिंह शेखावत

२ राजस्वानी गद्य डा० प्रेमनाथवर्य टंडन

३ राजस्वानी-नाटक-परम्परा श्रीवर्द्धन शर्मा

४ राजस्वानी भाषा के १० नाटक श्री

१ उपन्यास श्रीमदरबिन्द्र माहटा

२ श्री श्रीमदरबिन्द्र माहटा डा० कन्हैयालाल सहन नरोत्तमदास स्वामी

राजव सारस्वत श्री मनोहर शर्मा के कई सिद्ध ।



